# 1. परिप्रेक्ष्य

## 1. छत्तीसगढ़ : एक परिचय

छत्तीसगढ़ राज्य भारत के मध्य–पूर्व में स्थित है। प्राचीन काल में छत्तीसगढ़ को महाकोसल और दक्षिण कोसल के नाम से जाना जाता था। आजादी की लड़ाई में यहाँ के लोगों ने भरपूर योगदान दिया तथा 1950 में देश की आजादी के पश्चात् जब राज्यों का पुनर्गठन हो रहा था, पहली बार राजनाँदगाँव सम्मेलन में पृथक छत्तीसगढ़ की माँग उठी थी। अन्ततः 6 दिसम्बर 1999 को केन्द्रीय मंत्री मंडल ने छत्तीसगढ़ राज्य के गठन विषयक विधेयक को मंजूरी दी और 1 नवम्बर 2000 को 26वें राज्य के रुप में छत्तीसगढ़ का अभ्युदय हुआ।

प्रदेश का विस्तार 17:46° उत्तरी अक्षांश से 23:7° उत्तरी अक्षांश तथा 80:40° से 83:38° पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित है। राज्य के उत्तर में उत्तर प्रदेश, झारखंड हैं। उत्तर–पूर्व में बिहार और झारखंड, पूर्व में उड़ीसा, दक्षिण–पूर्व तथा दक्षिण में आंध्रप्रदेश, पश्चिम में महाराष्ट्र और उत्तर–पश्चिम में मध्यप्रदेश की सीमा है।

## 1.1 सांस्कृतिक परिदृश्य

प्रदेश में विभिन्न जाति, धर्म के विविध भाषा–भाषी लोग रहते हैं। यहाँ विभिन्न प्रकार की जनजातियाँ निवास करती हैं, इनमें गोंड़, कमार, भतरा, हल्बा, उराँव, बिंझवार, झरिया, साँवरा, बैगा, पहाड़ी कोरवा, पंडो, कँवर, माड़िया, मुड़िया आदि जनजातियाँ प्रमुख हैं।

यहाँ की संस्कृति विविधतापूर्ण है। लोक कलाओं, कथाओं, लोक साहित्य व लोक गीतों में इसे देखा जा सकता है। ग्रामीण संस्कृति में परम्परागत् मान्यतायें व रीति–रिवाजों का विशेष महत्व है। तीज, पोला, हरेली, छेरछेरा, दशहरा, दीवाली और होली इत्यादि त्यौहार कहीं न कहीं लोक संस्कृति से जुड़े हैं। सरगुजा का त्यौहार, बस्तर का दशहरा, बिलासपुर का राउत नाचा, ददरिया व गेड़ी नृत्य के साथ समस्त छत्तीसगढ़ में प्रचलित सुआ नृत्य, पंथी नृत्य और पंडवानी, भरथरी गायन इस अंचल की सांस्कृतिक समृद्धि के परिचायक हैं। यहाँ धातुकला, मूर्तिकला, काष्ठ व मिट्टी से कलात्मक वस्तुओं का निर्माण इत्यादि विशेष लोकप्रिय कलाएँ हैं। जिनके संरक्षण की आवश्यकता है।

## 1. 2 शैक्षिक परिदृश्य

शैक्षिक विकास की दृष्टि से यह राज्य निरन्तर प्रगति कर रहा है। 2001 की जनगणना के आधार पर प्रदेश की कुल जनसंख्या 2,07,95,956 है। यहाँ की शहरी जनसंख्या, कुल जनसंख्या का 20.08 प्रतिशत तथा ग्रामीण जनसंख्या 79.92 प्रतिशत है। राज्य में जनसंख्या का औसत घनत्व 154 व्यक्ति प्रति वर्ग किलो मीटर है। राज्य की साक्षरता दर 65.18 प्रतिशत है। 1991 की जनगणना में साक्षरता दर 42 प्रतिशत के लगभग थी। राज्य शिक्षा की दृष्टि से कैसे बड़े–बड़े डग भर रहा है यह इसी से पता चलता है। परन्तु महिला और पुरुष साक्षरता दर में अंतर अभी भी 25 प्रतिशत के लगभग है। इस पर हमें कार्य करना होगा। राज्य में बहुभाषा–भाषी हर क्षेत्र में पाये जाते हैं। वनांचलों मे रहने वाले समुदाय की भाषा गोंड़ी, हल्बी, सादरी, कुडूक, इत्यादि है। मैदानी भागों में छत्तीसगढ़ी बोलने वालों की बहुलता है। प्रदेश में शिक्षा का माध्यम हिन्दी है। प्रारंभिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण हेतु स्कूल शिक्षा विभाग के वार्षिक प्रतिवेदन 2007 के अनुसार राज्य में 35,320 प्राथमिक शालाएँ तथा 14,285 मिडिल स्कूल संचालित हैं। प्राथमिक स्तर पर शालाओं में बालकों की दर्ज संख्या 18,60,957 तथा बालिकाओं की दर्ज संख्या 17,02,909 है। मिडिल स्तर पर बालक एवं बालिकाओं की दर्ज संख्या क्रमशः 7,04,998 एवं 5,69,195 है।

प्रारंभिक शिक्षा के लोक–व्यापीकरण का कार्य सर्व शिक्षा अभियान के अंतर्गत राजीव गांधी शिक्षा मिशन को सौंपा गया है। जिसके तहत् 6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों की प्रारंभिक स्तर की शिक्षा पूर्ण करने का लक्ष्य रखा गया है। प्रारंभिक स्तर पर अध्ययनरत अनुसूचित जाति, जनजाति वर्ग की बालिकाओं को निःशुल्क गणवेश प्रदान किये गये। जहाँ पर कोई स्कूल नहीं है, ऐसे ग्रामों में ज्ञान–ज्योति स्कूल खोले गये हैं। बच्चों को वैकल्पिक शिक्षा के अंतर्गत शिक्षण सुविधाएँ उपलब्ध करायी गयी हैं। कक्षा 1 से 8 तक के सभी बालक एवं बालिकाओं को निःशुल्क पाठ्यपुस्तकें उपलब्ध करायी गयी हैं। इससे शासकीय एवं अनुदानप्राप्त विद्यालयों में अध्ययनरत बालक/बालिकाएं लाभान्वित हुए हैं। इसके बावजूद 2006–07 में 6 –14 आयु समूह के लगभग 1,23,000 बच्चे स्कूल नहीं जा रहे थे। यह चिंता का विषय है।

## 1.3 शिक्षा की चुनौतियाँ व प्रयास

(क) राज्य के बालक तथा बालिकाएँ जो शिक्षा सुविधाओं से वंचित हैं, सर्व शिक्षा अभियान के अंतर्गत विभिन्न योजनाओं के माध्यम से उन्हें शिक्षा सुविधाएँ उपलब्ध करायी जा रही हैं। जनजागरण, प्रवेशोत्सव इत्यादि के माध्यम से शत–प्रतिशत् नामांकन का लक्ष्य प्राप्त करने का प्रयास जारी है।

(ख) वनांचलों में रहने वाले विविध भाषा–भाषी व सांस्कृतिक विविधता वाले शिक्षार्थियों के मध्य सीखने–सिखाने की प्रक्रिया का संचालन एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। दुर्गम क्षेत्रों में अपर्याप्त आवागमन व संचार के साधन विद्यालय को भौतिक दृष्टि से सुदृढ बनाने में मुख्य रूप से बाधक हैं। इसी लिए शाला त्यागी बच्चों की संख्या अभी भी अधिक है। वार्षिक प्रतिवेदन वर्ष 2006–07 के अनुसार प्राथमिक शाला में औसत त्याग दर लगभग 21 प्रतिशत है। इसी प्रकार कक्षा 6 से 8 में औसत त्याग दर लगभग 14 प्रतिशत है। अतः शालात्याग दर में कमी लाना, शाला त्यागी बच्चों को शिक्षा की मुख्य धारा में पुनः लाना, सभी बच्चों की शाला में नियमित उपस्थिति सुनिश्चित करना एक महत्वपूर्ण चुनौती है।

(ग) प्रदेश में कुछ ऐसी जातियाँ भी निवास करती हैं जिनका जीवन पूर्णतः अस्थायी होता है ऐसे घुमन्तू समूह के बच्चों की शिक्षा–व्यवस्था कैसे की जाए, यह राज्य के लिए एक मुख्य समस्या है। राज्य के कुछ जिलों के निवासी प्रतिवर्ष एक मौसम विशेष में पड़ोसी राज्यों में रोजी–रोटी के लिए प्रवास करते हैं, उनके बच्चे शिक्षा जारी रखने में असमर्थ होते हैं। वनों पर आधारित जीवन व्यतीत करने वाली जातियों के बच्चों की शिक्षा व्यवस्था भी एक महत्वपूर्ण चुनौती है।

(घ) निःशक्तजनों तथा विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा की उपयुक्त व्यवस्था के लिए भी राज्य में सार्थक प्रयासों की आवश्यकता है। राज्य में प्रारंभिक शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए **पढ़बो–पढ़ाबो, स्कूल जाबो, स्कूल जाबो पढ़के आबो, स्कूल जाबो पढ़ेबर जिंदगी ल गढ़े बर, सुघ्घर शिक्षा सबो बर** के नाम से दर–वर्ष योजना चलायी गयी है। छत्तीसगढ़ सूचना शक्ति योजना अनुसूचित जाति और गरीबी रेखा से नीचे जीवन–यापन करने वाली कक्षा 9 से 12 की बालिकाओं हेतु चलायी जा रही है। राज्य में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा हेतु विशेष भर्ती अभियान चलाकर उन्हें विद्यालय से जोड़ने का प्रयास किया जा रहा है। शाला अप्रवेशी व शाला त्यागी बच्चों की समस्याओं के निदान के लिए रोचक व जीवनोपयोगी तथा ब्रिज कोर्स के रूप में सामग्री तैयार की गयी है।

## 1.4 पाठ्यचर्या की रूपरेखा – संक्षिप्त व्याख्या

शिक्षा में पाठ्यचर्या का नवीनीकरण और विकास निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली (एन.सी.ई.आर.टी.) भारत सरकार को शिक्षा के क्षेत्र में विशेष कर विद्यालयीन शिक्षा में नीतियों और कार्यक्रमों के निर्धारण और क्रियान्वयन में सहयोग और परामर्श देती है।

एक गतिशील क्रिया के रूप में पाठ्यचर्या के निर्माण की प्रक्रिया का तेजी से बदलते समाज के प्रति उत्तरदायी होना आवश्यक है।

अतः परिषद् देश के लिए लोगों की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं के अनुरूप राष्ट्र के समक्ष मौजूद मुख्य मुद्दों के संदर्भ में विद्यालयीन शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा तैयार करती है। इसके बाद राज्य स्तर पर पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रमों और पाठ्य–सामग्री विकसित करने के लिए रूपरेखा में निहित दिशा निर्देशों को ग्रहण कर या अपनी–अपनी आवश्यकताओं के अनुसार उसमें अनुकूलन करने रहे हैं।

पाठ्यचर्या, हमें एक ऐसी शैक्षिक प्रणाली की ओर मोड़ती है जो असमानताओं को घटाती है और उत्कृष्टताओं को प्रोत्साहित करती है।

पाठ्यचर्या का एक प्रमुख सरोकार है समरसतापूर्ण समाज के विकास के लिए शिक्षा उपलब्ध कराना, जिससे विभिन्न समूहों, जैसे विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों और सुविधा वंचित समूहों के शिक्षार्थियों के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर तथा उनके लिए शिक्षा की समान सुलभता सुनिश्चित की जा सके। विद्यालयीन शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा – 2000 में कहा गया है – पाठ्यचर्या तीन स्तम्भों – प्रासंगिकता, समता और उत्कृष्टता पर आधारित होनी चाहिए। राष्ट्रीय पहचान का सुदृढ़ीकरण और सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण, साथ ही स्वदेशी ज्ञान का समावेश प्रमुख मुद्दे हैं।

विश्व में भू–मंडलीकरण के बढ़ते प्रभाव के साथ रहने, कार्य करने के तरीकों और साधनों को जानने और विकसित करने का महत्व बहुत बढ़ गया है। एक जीवन्त समाज की रचना के लिए सूचना और संचार तकनीकी की चुनौतियाँ, शिक्षा को जीवन–कौशलों से जोड़ना, मूल्यों का विकास पाठ्यचर्या के ऐसे सरोकार हैं, जिस पर गंभीरता से कार्य करना है।

सबसे बड़ी चुनौती कि पाठ्यचर्या के विभिन्न सरोकार इस प्रकार से जुड़ें कि यह बोझिल न बने, प्रासंगिक व प्रभावशाली हो।

बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए संज्ञान, संवेग, क्रिया और कर्म के बीच अन्तर्सम्बन्ध ज़रूरी है। वैज्ञानिक तरीकों से ज्ञान प्राप्त करने के साथ–साथ रचनात्मक क्रिया–कलापों द्वारा ज्ञान अर्जन करने में सामाजिक अनुभवों का एक विस्तृत क्षेत्र भी बच्चों को प्राप्त होता है, इससे उन्हें सक्रिय रूप से सिखाने में मदद मिलती है। बुद्धि की पारम्परिक अवधारणा के विपरीत बहुविध–बुद्धि अधिक मान्य होने लगी है, इसलिए पाठ्यचर्या में इनकी झलक मिलना आवश्यक है।

सांस्कृतिक तथा परिवेश के अनुकूल शिक्षण प्रविधि, सौन्दर्य–बोध युक्त संवेदना, सतत, व्यापक मूल्यांकन, शिक्षकों का सबलीकरण पाठ्यचर्यागत प्रमुख सरोकार हैं जिन पर प्रभावी ढंग से ध्यान देना जरूरी है।

तेज़ी से बदलते विश्व में नवीन ज्ञान–चेतनाएँ पाठ्यचर्या में उचित स्थान पर हों, इसके लिए शिक्षा को आजीवन चलने वाली प्रक्रिया के रूप में देखना होगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की इस सिफारिश के बावजूद कि विभिन्न अवस्थाओं में पोषित व विकसित की जाने वाली दक्षताओं/कौशलों व मूल्यों की पहचान की जाए, स्कूली शिक्षा उन परीक्षाओं द्वारा और अधिक संचालित होती चली गयी जो महज जानकारी से भरी पाठ्यपुस्तकों पर आधारित हैं । अब स्कूली शिक्षा की भावी आवश्यकताओं को रेखांकित करना आवश्यक है जैसे– शिक्षा के लक्ष्य, बच्चों का सामाजिक परिप्रेक्ष्य, ज्ञान की प्रकृति, मानव विकास की प्रकृति और मनुष्य के सीखने की प्रक्रिया।

छत्तीसगढ़ राज्य की अपनी विशिष्ट समस्याएँ और संभावनाएँ हैं यह एक आदिवासी बहुल राज्य है, इसके 146 विकासखंडों में से 85 विकासखण्डों को आदिवासी विकासखण्ड का दर्जा प्राप्त है, जो कि सम्पूर्ण भारत की तुलना में 4 गुना अधिक है। इनकी विशिष्ट भाषा, बोलियों और संस्कृति को साथ लेते हुए पाठ्यचर्या को आगे बढ़ाना होगा।

छत्तीसगढ़ में विविधताएँ अधिक हैं। पाठ्यचर्या का मूल सिद्धांत बच्चों को 'ज्ञात से अज्ञात की ओर' ले जाने को विविधताओं के बीच लागू करना कठिन चुनौती है यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि स्थानीय समुदाय की गतिविधियों, आदतों, शब्दकोश, विचार बच्चों के सीखने और पढ़ने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। यदि पाठ्यचर्या इन सब से दूर हुई तो शैक्षिक प्रगति सही गति नही पकड़ पायेगी। बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि कम होगी, उनकी रुचि घटेगी। आवश्यक है कि उपयोगी, सकारात्मक वातावरण बनाने की दिशा में विद्यालय और समुदाय दोनों अपनी ज़िम्मेदारी समझें।

प्रदेश की अपनी विशिष्ट संस्कृति और पहचान होते हुए भी राष्ट्रीय परिदृश्य से समानता रखता है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में जिन चिन्ताओं का उल्लेख किया गया है वे प्रदेश के सन्दर्भ में भी विचारणीय हैं और उनका समाधान किया जाना है ताकि शैक्षिक लक्ष्य की पूर्ति की जा सके।

- हमारी स्कूल–व्यवस्था में एक कठोरता है, लचीलेपन में कमी है, जो परिवर्तन के रास्ते में एक बाधा है।

- सीखना एक अलग गतिविधि है, जिसका बच्चों के दैनिक जीवन, उनके ज्ञान से कोई सम्बन्ध नहीं है।
- विद्यालयीन शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में सूझ का, सृजन का कोई स्थान नहीं है बल्कि इसे हतोत्साहित किया जाता है।
- बच्चे के अपने अनुभवों से ज्ञान रचने की सामर्थ्य को अनदेखा किया जाता है। बच्चों के दृष्टिकोण से शिक्षा व्यवस्था संचालित नहीं हो रही है। बच्चे की स्वाभाविक रुचियों और विकास की कद्र नहीं की जा रही है।

## 1.5 राज्य की पाठ्यचर्या विकसित करने के मार्गदर्शक सिद्धांत

पिछले कुछ वर्षों में राज्य में प्रारंभिक शिक्षा का प्रचार–प्रसार अत्यंत तेजी से हुआ है। शिक्षा की महत्ता को पहचाना गया है और जीवन कौशल के रूप में इसे प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक माना गया है।

विद्यालयों में शिक्षा एक आनंदपूर्ण अनुभव होगा यदि, हम अध्यापन में बच्चों के रचनात्मक स्वभाव का सदुपयोग करें। वर्तमान स्कूली पाठ्यचर्या और परीक्षा–व्यवस्था बच्चों को बहुत सी जानकारी रटने और उगलने को विवश करती हैं। इनमें परिवर्तन करने के लिए निम्न मार्गदर्शक सिद्धांत आवश्यक हैं–

- ज्ञान को स्कूल के बाहर जीवन से जोड़ना ताकि सीखा गया ज्ञान स्थायी हो तथा उसका उपयोग दैनिक जीवन में किया जा सके। कक्षा के ज्ञान को बच्चों के जीवन–अनुभव से जोड़ा जाए ताकि समाज के ऐसे बच्चे जिन्हें काम से जुड़े कौशल का ज्ञान हो उसे लेकर अपने को गौरवान्वित महसूस कर सकें।
- पढ़ाई को रटने से मुक्त करना।
- पाठ्यचर्या का विकास इस तरह से हो कि वह बच्चों को चहुँमुखी विकास के अवसर उपलब्ध कराये केवल पाठ्यपुस्तक केंद्रित न हो।
- परीक्षा को लचीला बनाना और कक्षा की गतिविधियों से जोड़ना।
- प्रजातांत्रिक व्यवस्था के साथ–साथ बच्चों को राष्ट्रीय चिंताओं के प्रति सजग बनाना।
- सभी बच्चों को स्कूल से जोड़ना। उनमें उनकी गरिमा और महत्व का एहसास कराते हुए सीखने के लिए विश्वास जगाना।

- बच्चों में आत्मसम्मान व नैतिकता के विकास के साथ ही उनकी रचनात्मकता का पोषण करना। बच्चों की जन्मजात् बुद्धि और कल्पना का आदर करना ।

- पर्यावरण का संरक्षण एवं पोषण आज के समाज की महती आवश्यकता है क्योंकि आधुनिक तकनीक युक्त जीवन शैली से पर्यावरण असंतुलन में काफी वृद्धि हुई है। अतः पर्यावरण को शिक्षा के सभी स्तरों पर समाहित कर पर्यावरण संबंधी जागरूकता उत्पन्न करना।

- शिक्षा सार्थक तभी हो सकती है, जब वह बच्चों को इतना समर्थ बनाये कि वह शांति को जीवन शैली के रूप में चुन सके और संघर्ष को सुलझाने की क्षमता रखे, न कि संघर्ष का निष्क्रिय दर्शक बने अथवा हिंसा पर उतारू हो जाए।

- सांस्कृतिक विरासत और राष्ट्रीय अस्मिता को सुदृढ़ करने के लिए भावी पीढ़ी को इतना सक्षम बनाना कि वह नयी प्राथमिकताओं व बदलते सामाजिक संदर्भ के अनुरूप अतीत का पुनर्मूल्यांकन व पुनर्व्याख्या कर पाये और वह सांस्कृतिक विविधता के प्रति प्रतिबद्ध हो।

- शिक्षा से बच्चों में आत्म–विश्वास का संचार करना ताकि वे अपने जीवन के निर्माता बनें। उनमें सतत् शिक्षा की जागृति, सामर्थ्य तथा ललक उत्पन्न हो। आज विश्व में तीव्र गति से आने वाले बदलाव से वह घबराये नहीं वरन् उसका आकलन कर उसे स्वीकार करें अथवा अस्वीकार करें।

- शिक्षा शरीर, मन, मस्तिष्क और जीवन के विकास पर ज़ोर देती है। बच्चों को शारीरिक रूप से चुस्त बनाना, उन्हें मानसिक और आर्थिक रूप से स्वावलंबी बनाना । भोजन के चुनाव के बारे में भी बच्चों को सजग करना ताकि वे संतुलित एवं उत्तम भोजन ग्रहण करें। भूख के अनुसार खाएँ। इसके अतिरिक्त उनमें स्वास्थ्य सम्बंधी आदतों का विकास करना, स्वास्थ्यवर्धक उत्तम भोजन के चुनाव करने के बारे में भी बच्चों को सजग करना होगा।

- गुणवत्तामूलक समाज के विभिन्न वर्गों के सभी बच्चों को विभिन्न क्षेत्रों में उपलब्ध सीखने के अवसर की समानता हो, यह शिक्षकों के लिए एक बड़ी चुनौती है जिसे उन्हें स्वीकार करना होगा।

बच्चों में नागरिकता का प्रशिक्षण औपचारिक शिक्षा का महत्वपूर्ण पहलू है जिससे हमारा सहभागिता आधारित लोकतंत्र एवं संविधान में निहित मूल्य सुदृढ़ होंगे। संवैधानिक मूल्यों का संवर्धन करना भी पाठ्यचर्या का उद्देश्य है।

## 1.6 शिक्षा का सामाजिक संदर्भ

### 1.6.1 लोकतांत्रिक समाज के लिए शिक्षा

हमारा संविधान एक ऐसे समाज की कल्पना करता है जो सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक रूप से समतायुक्त न्याय पर आधारित हो। व्यक्तियों को विचारों की अभिव्यक्ति तथा धर्म संबंधी विश्वासों की स्वतंत्रता हो। यह एक ऐसे लोकतांत्रिक, धर्मनिरपेक्ष एवं समाजवादी समाज की कल्पना है जिनमें नागरिकों में पारस्परिक सद्भावना सहयोग व सहिष्णुता हो। अतः शिक्षा के द्वारा ऐसी समझ तथा दृष्टि उत्पन्न करना है जो इस प्रकार के समाज को सुदृढ़ कर सके। शिक्षार्थी में सामाजिक न्याय के प्रति जागरूकता उत्पन्न करना न्यायप्रियता के साथ अन्याय से बचाव की समझ का विकास करना होगा ताकि वह एक स्वस्थ और विकासशील समाज की रचना में योगदान कर सके।

### 1.6.2 बहुसांस्कृतिक समाज में व्यापक दृष्टिकोण के लिए शिक्षा

हमारा समाज बहुसांस्कृतिक समाज है जिसमें विविध संस्कृतियाँ अपनी विशिष्टताओं के साथ विद्यमान हैं । इनके रीति–रिवाज, भाषाएँ मान्यताएँ एवं परम्पराएँ अलग–अलग हैं। अतः शिक्षा का सरोकार शिक्षार्थी में विचारों का खुलापन एवं विभिन्न संस्कृतियों की समझ तथा सहिष्णुता उत्पन्न करना है। शिक्षा का एक सरोकार शिक्षार्थी में ऐसे दृष्टिकोण का विकास करना है जो सामाजिक परिवर्तनों को तुलनात्मक रूप से परख सके, सामाजिक व्यवस्था में नवीन परिवर्तनों को खुले विचारों से स्वीकार कर सके।

### 1.6.3 अपने अधिकारों और कर्तव्यों की जागरूकता के लिए शिक्षा

समाज में हर व्यक्ति को विचारों और उनकी अभिव्यक्ति, अपने आदर्शों को चुनने तथा उन्हें प्राप्त करने के लिए प्रयासों की स्वतंत्रता है। शिक्षा के माध्यम से शिक्षार्थी में अभिव्यक्ति क्षमता को विकसित कर अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जागरूक बनाना भी शिक्षा का महत्वपूर्ण सरोकार है।

### 1.6.4 अवसरों की समानता के लिए शिक्षा

समाज में विभिन्न असमानताओं को कम करने के लिये समान रूप से गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुलभ कराना होगा, इस दृष्टि से बालिकाओं की शिक्षा, विशेष आवश्यकताओं वाले

शिक्षार्थियों की शिक्षा तथा सुविधावंचित समूहों की शिक्षा पर विशेष ध्यान देना आवश्यक होगा, साथ ही होनहार एवं प्रतिभावान शिक्षार्थियों की उत्कृष्टता को भी प्रोत्साहित करना होगा।

### 1.6.5 मानवीय मूल्यों के विकास के लिए शिक्षा

शिक्षा शिक्षार्थी में मानवीय मूल्यों के विकास की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान देती है। शिक्षार्थी में देशप्रेम, बड़ों के प्रति सम्मान, मित्रतापूर्ण व्यवहार, सहयोग की भावना, आत्म–अनुशासन, साहस आदि के साथ नियमितता, समय की पाबंदी, उत्तरदायित्व की भावना, परिश्रमशीलता, उद्यमशीलता, सृजनात्मकता की क्षमता का विकास करना होगा। उनमें पर्यावरण के प्रति संचेतना, दूसरों के प्रति संवेदनशीलता एवं सम्मान की भावना विकसित करनी होगी। अतः इस उद्देश्य को भी शिक्षा के सरोकार के रूप में स्वीकारना होगा।

### 1.6.6 जीवन–कौशलों की शिक्षा

शिक्षा का दायित्व छात्रों को जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिए सक्षम बनाना है। शिक्षा को जीवन–कौशलों के विकास से जोड़ना होगा। अतः शिक्षा का एक सरोकार उन कौशलों को विकसित करना है जिससे बालक आगे चलकर न केवल जीवकोपार्जन कर सके बल्कि उसमें आत्म–विश्वास की भावना भी विकसित हो सके।

### 1.6.7 समसामयिक समस्याओं के समाधान के लिए शिक्षा

शिक्षा केवल जानकारी ही नहीं है वरन् अनवरत गति से चलने वाली प्रक्रिया है। अतः बालक में समसामयिक परिस्थितियों व समस्याओं से जूझने की योग्यता शिक्षा के माध्यम से विकसित करनी होगी। समस्या के समाधान की योग्यता के साथ नवीन ज्ञान को प्राप्त करने की क्षमता का विकास भी शिक्षा का महत्वपूर्ण सरोकार है।

## 1.7 शिक्षा में गुणवत्ता

शिक्षा का मुख्य उद्देश्य शिक्षार्थी में अंतर्निहित सर्वोत्तम अंश बाहर निकालने और उच्च सामाजिक योगदान के लिए उसे परिष्कृत करना है। वास्तविक विकास तभी हो सकता है, जब स्वतंत्र और स्वाभाविक रूप से बढ़ने के अवसर मिलें। ऐसी शिक्षा छत्तीसगढ़ राज्य के शिक्षार्थियों को अंतर्राष्ट्रीय स्तर के छात्रों के समकक्ष लाने में सक्षम होगी। अतः संपूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया में गुणवत्ता विकास के लिए प्रयास करना ही पाठ्यचर्या का मुख्य सरोकार है।

## 1.8 सौंदर्य व कला के विभिन्न रूपों को समझने के लिए शिक्षा

बच्चे में सौंदर्य कला और मनोरंजन के विभिन्न स्वस्थ और सार्थक स्वरूपों को समझकर आनंद उठाने की क्षमता का विस्तार करना और रचनात्मक अभिव्यक्ति के अवसर उपलब्ध कराना भी शिक्षा का एक महत्वपूर्ण सरोकार है, जिससे वे ऐतिहासिक धरोहरों और पर्यटन स्थलों की रक्षा करें, उन्हें विकृत न होने दें ।

## 1.9 राष्ट्रीय एकता के लिए शिक्षा

भारतीय सभ्यता और उसकी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के अध्ययन से शिक्षार्थी में राष्ट्रीय पहचान विकसित हो सकेगी जिससे वह अपने देश तथा भारतीय होने पर गर्व करेगा। अतः शिक्षा का एक सरोकार राष्ट्रीय एकता की भावना को सृदृढ़ करना है।

## 1.10 अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव के लिए शिक्षा

सामाजिक विचारधाराओं में परिवर्तन के कारण आज हम केवल अपने परिवार, अपने समाज व राष्ट्र तक ही सीमित नहीं हैं। संसार के विभिन्न राष्ट्रों में होने वाले परिवर्तनों का हमारी सामाजिक व्यवस्था पर जो प्रभाव पड़ रहा है, वह काफी व्यापकता के साथ हमारे व्यक्तिगत जीवन को भी प्रभावित कर रहा है। विश्व समुदाय की समस्याओं के प्रति संवेदनशीलता व स्वस्थ दृष्टिकोण विश्व बन्धुत्व की भावना के विकास में सहायक होता है। अतः शिक्षा के सरोकार के रूप में वैश्विक विचारधारा का पोषण व संवर्धन करना होगा।

## 1.11 अंतर्राष्ट्रीय नागरित्व

तीव्र गति से हम अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था से जुड़ रहे हैं। हमारे विद्यार्थी विदेशों में अच्छी पहचान बना चुके है। भविष्य में इनकी संख्या में वृद्धि की संभावना है।

* * *

# 2. शिक्षार्थी व सीखना

शिक्षार्थी अपनी जन्मजात क्षमताओं, परिवेश एवं पूर्व अनुभवों के आधार पर प्रतिक्रियाएँ कर सकता है, अनुभवों की व्याख्या कर सकता है। वास्तव में यह प्रक्रिया ज्ञान प्राप्त करने, सीखने एवं समझने सम्बन्धी होती है। बच्चा अपने समाज में घटित होने वाले सामाजिक, सांस्कृतिक परिवर्तनों और स्थितियों से जुड़ा होता है। अतः उसके मस्तिष्क में पूर्व विचार भी होते हैं। पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक, उच्च प्राथमिक स्तर के बच्चों की प्रकृति एवं विकास की विशेषताओं का सूक्ष्मावलोकन अत्यंत आवश्यक है क्योंकि ये विशेषताएँ शिक्षार्थियों को समझने में शिक्षकों का मार्गदर्शन करेंगी।

बच्चों का समुदाय, उनका परिवेश, समुदाय की गतिविधियाँ, विचार, भाषा बच्चों के सीखने और पढ़ने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। समाज में हर पीढ़ी को विरासत में संस्कृति और ज्ञान का भंडार मिलता है, जिसमें वह अपनी गतिविधियों और समझ से नये ज्ञान की रचना करता है। इस तरह समाज से मिलने वाली अनौपचारिक शिक्षा विद्यार्थी को अपना ज्ञान स्वयं सृजित करने की स्वाभाविक क्षमता को विकसित करती है। अतः स्कूलों में बच्चों के अनुभवों, उनकी अभिव्यक्ति, उनकी सक्रिय सहभागिता को प्राथमिकता देनी होगी। उनकी सक्रियता, उनके रचनात्मक सामर्थ्य को पोषित और संवर्धित करना होगा क्योंकि सीखना अपने आप में एक सक्रिय व सामाजिक गतिविधि है।

## 2.1 शिक्षार्थी के सन्दर्भ में सीखना

शिक्षण, शिक्षार्थी एवं शिक्षक के मध्य होने वाली अंतःक्रियाओं की एक क्रमबद्ध श्रृंखला है। वर्तमान विचार धारा के अनुसार शिक्षार्थी निष्क्रिय रूप से ज्ञान को ग्रहण करने की बजाय सक्रिय रूप से ज्ञान का सृजन करने वाला होता है। जब वह कक्षा में आता है तब उसके मस्तिष्क में कुछ पूर्व विचार, अनुभव व ज्ञान भी होते हैं। इन पूर्व विचारों, अनुभवों और धारणाओं के आधार पर वह अपने कक्षागत अनुभवों की व्याख्या करता है। इस प्रकार से ज्ञान प्राप्ति सकारात्मक एवं विकासात्मक प्रक्रिया है, जो प्रत्येक शिक्षार्थी के व्यक्तिगत ज्ञान और उसकी स्वाभाविक विलक्षणता का परिचायक है। यदि शिक्षार्थी की व्यक्तिगत क्षमता पर ध्यान केंद्रित करते हुए उसे मार्गदर्शन दिया जाए तो उसकी संज्ञानात्मक क्षमता में वृद्धि होती है।

सीखना निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। विद्यार्थी अपने पूर्व अनुभवों, मान्यताओं और प्रयोजनों (आवश्यकताओं) के आधार पर अवधारणाओं का निर्माण करता है और अपने उद्देश्यों की प्राप्ति का प्रयास करता है। यदि शिक्षार्थी अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में सफल रहता है, तो उसे अपने ज्ञान के सृजन में मदद मिलती है।

असफलता की स्थिति में वह अपने दृष्टिकोणों को स्वयं बदल देता है। इस प्रकार सीखने की क्षमता के आधार पर वह अधिक उपयुक्त दृष्टिकोण विकसित करने की क्षमता का विकास कर लेता है। इसी तरह सामाजिक प्राणी बनने की प्रक्रिया भी सीखने की ही प्रक्रिया है, जो दूसरों के दृष्टिकोणों को समझकर सीखने पर आधारित है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार बच्चा 2 वर्ष की आयु में ही सकारात्मक अथवा नकारात्मक दृष्टिकोण बना लेता है। शिक्षा ही ऐसी प्रक्रिया है जो प्रत्येक क्षण दीर्घकालीन दृष्टिकोणों के बदलाव में मदद करती है।

बच्चे उसी वातावरण में सीख सकते हैं, जहाँ उन्हें लगे कि उन्हें महत्वपूर्ण माना जा रहा है। सीखने का भय, कड़े अनुशासन और तनाव से संबंध न होकर आनंद और संतोष के साथ रिश्ता होना हितकारी होता है।

जैसे–जैसे हमारे स्कूलों का विस्तार हो रहा है, वैसे–वैसे ज़्यादा संख्या में समाज के सभी वर्गों के बच्चे स्कूलों में नामांकित हो रहे हैं। सभी बच्चों में सीखने की क्षमता है, इनकी विविध क्षमताओं को मान्यता मिले, सभी बच्चों की ज्ञान एवं कौशल तक पहुँच हो। प्राथमिक से होकर माध्यमिक स्तर तक और उसके बाद भी शारीरिक एवं भावनात्मक सुरक्षा हर प्रकार के सीखने की आधारशिला है।

सच्चे शिक्षण का सिद्धान्त यह है कि कुछ भी सिखाया नहीं जा सकता। अध्यापक कोई अनुदेशक अथवा काम लेने वाला व्यक्ति नहीं है, वह एक सहायता देने वाला व्यक्ति और मार्गदर्शक है। उसका काम ध्यानाकर्षण है, अपने विचार लादना नहीं। बच्चों को ज़बरदस्ती माता–पिता अथवा अध्यापक द्वारा वांछित आकार में ढालने का विचार बर्बरतापूर्ण है, एक अंधविश्वास है। बच्चे को अपनी प्रकृति के अनुसार विकास, विस्तार करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।

## 2.2 शिक्षार्थी की प्रकृति

सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बिन्दु है, बच्चे की प्रकृति का ज्ञान। उसके विकास के विभिन्न चरण है। विद्यालय में प्रवेश के समय बच्चा अत्यंत जिज्ञासु होता हैं। उसका मस्तिष्क विशेष ग्रहणशीलता की अवस्था में होता है, इस अवस्था का सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण स्थान है।

## 2.3 विकास और सीखना

पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक शिक्षा का सम्पूर्ण समय बालक की शारीरिक तथा मानसिक वृद्धि का है जो आवश्यकताओं, प्रवृत्ति, प्रेरणा व प्रोत्साहन के साथ–साथ बदलता है।

शैशवकाल से किशोरावस्था का समय बहुत तेजी से होने वाले विकास और परिवर्तन का होता है। सीखने और विकास के प्रति पाठ्यचर्या का ऐसा रुख होना चाहिए जो शारीरिक और मानसिक विकास के बीच अंतर्संबंध को देख सके। इसके लिए मूल आवश्यकताएँ– पौष्टिक आहार, शारीरिक व्यायाम और स्वस्थ पारिवारिक व सामाजिक अंतर्संबंध हैं।

## 2.3.1 पूर्व प्राथमिक स्तर एवं प्राथमिक स्तर

पूर्व प्राथमिक स्तर के दौरान बच्चे की शारीरिक वृद्धि और मानसिक योग्यता का विकास होता है। प्रायः बच्चे की प्रारंभिक प्रवृत्तियाँ जीवन में सदैव बनी रहती हैं। किन्तु किसी भी आयु में उनमें परिवर्तन संभव है। जैसे–जैसे बालक का शारीरिक विकास होता है वैसे–वैसे वह सामाजिक और सांस्कृतिक संकेतों के साथ प्रतिक्रिया करने लगता है जिससे उसके संज्ञानात्मक अनुभवों में वृद्धि होने लगती है।

बच्चों का शारीरिक विकास, मानसिक व संज्ञानात्मक विकास में भी मददगार है जैसे– सोचने, तर्क करने की क्षमता, भाषा के प्रयोग करने, परस्पर मिलकर काम करने, अंतःक्रिया करने की क्षमता मानसिक के साथ–साथ शारीरिक विकास से जुड़ी हुई है।

प्रत्येक बच्चे में एक सम्पूर्ण व्यक्ति समाहित होता है, जो सोचने, महसूस करने और अलग–अलग व्यवहार करने की क्षमता भी रखता है।

0–3 वर्ष की अवस्था व्यक्ति के विकास के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण अवधि है। अनेक शोध दिखाते हैं कि मस्तिष्क का अधिकांश विकास (लगभग 85 प्रतिशत) आरंभिक वर्षो में होता है, मूल्यों और प्रवृत्तियों की नींव भी इन्ही वर्षों में पड़ जाती है। इस अवस्था में संज्ञानात्मक विकास की गति तीव्र होती है, बच्चा आसानी से अनेक भाषाएँ और अन्य क्रियाएँ सीख सकता है, अतः उन्हें उचित, स्वस्थ और प्रेरक वातावरण की आवश्यकता होती है ।

स्वस्थ बचपन, स्वस्थ व्यक्तित्व की ओर ले जाता है, उपेक्षा या अभाव भविष्य में नकारात्मक परिणाम दे सकते हैं और बच्चे जीवन भर के लिए विकास की दौड़ में पिछड़ सकते हैं। घर पर बच्चे को उचित देखभाल, संरक्षण, सही अवसर, पर्याप्त अनुभव मिलना आवश्यक है।

## विकास के विभिन्न चरणों में मस्तिष्क का विकास

| आयु | मस्तिष्क का भार (ग्राम में) |
|---|---|
| 20 सप्ताह गर्भावस्था | 100 |
| जन्म के समय | 400 |
| 18 माह आयु के समय | 800 |
| 3 वर्ष आयु के समय | 1100 |
| वयस्क | 1300–1400 |

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में प्रारंभिक बाल्यावस्था 0–6 आयु वर्ग है, इसमें प्रारंभिक बाल शिक्षा कार्यक्रम/पूर्व प्राथमिक शिक्षा में देखभाल और निगरानी को भी जोड़ा गया है, इसे प्रारंभिक शिशु–शिक्षा और देखभाल ई.सी.सी.ई. नाम दिया गया है। देखभाल के प्रमुख तत्व स्वास्थ्य और पौष्टिक आहार हैं, इसमें समुदाय की सहभागिता पर ज़ोर दिया गया है। साथ ही समेकित बाल विकास योजना और ई.सी.सी.ई. कार्यक्रमों के सभी स्तरों के समन्वय पर बल दिया गया है।

पाठ्यचर्या में भी राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुरूप इस उम्र के बच्चों को औपचारिक शिक्षा के दबाव (पढ़ने–लिखने और गणित) से मुक्त रखा जाएगा। इसमें खेल और क्रिया–कलापों को अपेक्षाकृत अधिक महत्व दिया जाएगा।

सुविधा वंचित वर्ग के बच्चों की देखभाल और प्रोत्साहन पर भी ध्यान केन्द्रित करना होगा। भौतिक सुविधाएँ जैसे खिलौने, पुस्तकें, खेल की सुविधा आदि के अभाव के कारण इनका विकास विशेष रूप से मानसिक एवं भाषायी विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना रहती है। हमारे राज्य में ऐसे बच्चों की संख्या बहुत अधिक है। ई.सी.सी.ई. को प्रभावी ढंग से चलाकर सुविधा वंचित वर्ग के बच्चों की क्षतिपूर्ति की जा सकती है, बच्चों के विकास से सुदृढ़ नींव तैयार हो सकती है। जिससे आगे चलकर उनमें निहित क्षमताओं का पूर्ण विकास हो सकेगा।

प्राथमिक स्तर के बालक में शारीरिक विकास की प्रक्रिया अपेक्षाकृत धीमी हो जाती है। मांसपेशियाँ पुष्ट होने लगती हैं। इन शारीरिक परिवर्तनों के साथ मानसिक विकास में स्थायित्व आ जाता है। यदि उनकी व्यक्तिगत क्षमता पर ध्यान केन्द्रित किया जाए, तब उनकी संज्ञानात्मक क्षमताएँ बढ़ सकती हैं। सामाजिक प्रभाव भी संज्ञानात्मक क्षमता के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। साथी समूहों के साथ उनकी अंतःक्रिया से उनमें समूह मे काम करने की क्षमता का विकास होता है।

## 2.3.2 उच्च प्राथमिक स्तर (किशोरावस्था)

उच्च प्राथमिक स्तर पर होने वाले शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक परिवर्तन शरीर एवं मन दोनों को ही प्रभावित करते हैं। अतः यह अवस्था संक्रमण अवस्था कहलाती है। इस अवस्था में बालक परिपक्वता की ओर अग्रसर होता है। मानसिक स्तर पर वह किसी विशिष्ट समस्या से छुटकारा पाने के लिए सभी काल्पनिक परिस्थितियों के संबंध में तार्किक रूप से सोचने लगता है। बालक अपनी पहचान बनाने का प्रयास करने लगता है। इस प्रक्रिया में वह अपने विचारों के साथ–साथ दूसरों के विचारों तथा सामाजिक दृष्टिकोण को भी समझने लगता है। आपसी सहयोग की भावना बढ़ने लगती है। बालक की रुचि में बार–बार परिवर्तन होता है तथा कभी–कभी वह उनमें विरोधाभास का अनुभव भी करने लगता है।

किशोरावस्था अस्मिता के विकास के लिए महत्वपूर्ण अवस्था है। तीव्र शारीरिक बदलावों का प्रभाव उनके सामाजिक और मनोवैज्ञानिक पहलुओं पर पड़ता है। अधिकतर किशोर इन परिवर्तनों का सामना बिना पूर्ण ज्ञान एवं समझ के करते हैं जो उन्हें खतरनाक स्थितियों जैसे यौन रोगों, यौन दुर्व्यवहार, एड्स, एवं नशीली दवाओं के सेवन का शिकार बना सकती हैं।

यह वह समय होता है जब आत्मसात किये गये तमाम मानकों और विचारों पर सवाल खड़े होते हैं। दोस्तों के मत महत्वपूर्ण हो जाते हैं इस अवस्था में माता–पिता, शिक्षकों को सजग–सतर्क रहना होगा, उनसे मित्रता का व्यवहार कर भावनात्मक सहारा देना होगा। उनमें निहित असीमित ऊर्जा को सही दिशा देना, सकारात्मक सामाजिक गतिविधियों से जोड़ना पाठ्यचर्या का उद्देश्य है।

स्वस्थ शारीरिक मनो–सामाजिक विकास के लिए खेलों और योग से विद्यार्थियों को जोड़ना उनमें इन खेलों और योग की गतिविधियों से बेहतर स्वास्थ्य, स्थूल गत्यात्मक कौशल (Gross motar skill) समन्वयन, संयम, नियंत्रण की क्षमताओं को विकसित करना होगा।

खेल के मैदानों, उपकरणों, नियमों में लचीलापन लाना होगा, जिससे बच्चों को इन गतिविधियों में शामिल किया जा सके। इसमें प्रतिभावान बच्चे एथेलेटिक्स, जिमनास्टिक, खो–खो, कबड्डी, फुटबाल, तैराकी, तीरंदाजी, योग, नृत्यकला आदि में दक्षता के उच्च स्तरों को प्राप्त कर सकते हैं।

## 2.3.3 माध्यमिक शिक्षा

जैसा कि राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा में कहा गया है माध्यमिक स्कूल बच्चों की शारीरिक बदलावों और अस्तित्व विकास का समय होता है। इस अवधि में अमूर्त का उपयोग करके तर्क करने की क्षमता विकसित हो जाती है। जिससे बच्चों में वर्तमान और मौजूद चीजों से आगे बढ़ कर उन चीजों की समझ के साथ जुड़ने की क्षमता आ जाती है, जो सामने नही होती। इस जुड़ाव में ज्ञान–सृजन की क्षमता भी शामिल है।

इस स्तर पर बच्चों को विभिन्न विषयों के महत्व और उनके अध्ययन के प्रति जागरूक बनाना चाहिए जिससे वे विभिन्न विषयों में अपने लिए संभावनाओं और अवसरों को ढूँढ सकें। इस समय बच्चों को निर्देशन और परामर्श की आवश्यकता होती है, जो शिक्षकों अभिभावकों और व्यावसायिक परामर्श दाताओं की मदद से पूरी की जा सकती है। इस स्तर पर बच्चों को सृजनात्मक कार्य–कौशलों को सीखने के अवसर देने होगें। व्यावसायिक विकल्पों और स्थानीय समुदाय के उत्पादक कार्य–संसार से बच्चों को जोड़ना होगा।

## 2.3.4 उच्च माध्यमिक स्तर

उच्च माध्यमिक स्तर– इस स्तर पर बच्चे अपनी रूचि समझ और भविष्य को ध्यान मे रख कर व विषयों का चुनाव करते है। अकादमिक व व्यावसायिक विषयों के विभिन्न विकल्प उनके सामने खुलें हों। सीखने के महत्वपूर्ण पहलुओं का भी ध्यान रखना आवश्यक है। प्रयोग करना, भ्रमण, सन्दर्भ सामग्री पढ़ना, परियोजनाएँ बनाना, प्रस्तुतियाँ करना सीखने के महत्वपूर्ण पहलू है। स्कूलो मे साधन संपन्न प्रयोगशालाएँ, पुस्तकालय और कम्प्यूटर की उपलब्धि भी बहुत जरूरी है। इस स्तर पर बच्चों को प्रशिक्षित व्यावसायिकों द्वारा मार्गदर्शन और परामर्श भी उपलब्ध होना चाहिए।

## 2.4. बच्चे कैसे सीखते हैं ?

- सभी बच्चों में सीखने की जन्मजात प्रवृत्ति होती है और वे स्वभाविक रुप से सीखते हैं।
- प्रत्येक बच्चा व्यक्तिगत स्तर पर एवं दूसरों से विभिन्न तरीकों से सीखता है। अतः प्रत्येक बच्चे को सीखने के सभी तरह के अवसर मिलने चाहिए।
- सीखने की प्रक्रिया स्कूल में और स्कूल के बाहर दोनों जगहों पर चलती है।
- बच्चे स्वयं करके, सुनकर व देखकर सीखते हैं।
- बच्चे अनुकरण करके सीखते हैं।

- बच्चे कल्पना से सीखते हैं।
- जिज्ञासा की संतुष्टि के लिए किये गये कार्य से सीखते हैं।
- अनुकूल शैक्षिक वातावरण से सीखते हैं।
- प्रयास एवं त्रुटि से सीखते हैं।
- प्रोत्साहन, प्रशंसा एवं प्रेरणा से सीखते हैं।
- रुचि के अनुसार सीखते हैं।
- बच्चे किसी घटना, कहानी, तथ्य और विशेषता को किसी अन्य घटना, कहानी, तथ्य और विशेषता आदि से सहसंबंध स्थापित कर सीखता हैं।
- संगति से सीखते हैं।
- परिश्रम एवं स्वप्ररेणा से भी सीखते हैं।
- विरोध करने पर संकल्प (जिद्द) से भी सीख जाते हैं।
- पहल एवं पसंद के आधार पर सीखते हैं।
- तीव्र इच्छा होने पर भी सीखते हैं।
- कौतूहल से भी सीखते हैं।
- बार–बार प्रश्न करके सीखते हैं।
- घर एवं परिवार के संस्कार, व्यवहार से सीखते हैं।
- परिवेश से सीखते हैं।
- प्रतिस्पर्धा की भावना से सीखते हैं।
- सीखने–सिखाने के बीच उचित अन्तः क्रिया होने पर बच्चे प्रभावी ढंग से सीखते हैं।
- अनुभव से सीखते हैं।
- अपनी क्षमता एवं स्वभाविक गति से सीखते हैं।
- सुझाव, संकेत एवं मार्गदर्शन से सीखते हैं।

- परिणाम के ज्ञात होने पर भी सीखते हैं।
- शिक्षक ऐसी सकारात्मक कार्यनीति अपनाएँ जिससे विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों सहित सभी को सीखने का उपयुक्त वातावरण मिले।
- प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च माध्यमिक स्कूलों में भी समूहों में की जाने वाली परियोजनाएँ और गतिविधियाँ सीखने का आवश्यक अंग होनी चाहिए।
- सीखने की प्रक्रिया में व्यस्त बालक या बालिका अपने ज्ञान का सृजन स्वयं करते हैं। बच्चों को ऐसे प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित करना जिनसे वे स्कूल में सिखायी जाने वाली चीजों का संबंध बाहरी दुनिया से स्थापित कर सके, अपने शब्दों में जवाब दे सकें और अपने अनुभव बता सकें। ज्ञान जब इस तरह स्कूल के बाहर समुदाय में परिष्कृत होता हैं, तब वह कौशल का रूप लेता है।
- सीखने की एक उचित गति होनी चाहिए ताकि बच्चे अवधारणाओं को रटने की ओर प्रेरित न हों ताकि परीक्षा के बाद इस सीखे हुए ज्ञान को भूल न जाएँ।
- सीखने में विविधता और चुनौतियाँ हों, जिससे सीखने की प्रक्रिया में रोचकता बनी रहे और विद्यार्थियों के लिए अध्ययन में सफलता के पर्याप्त अवसर हों जिससे वे अंतर्निहित संभावनाओं का पूर्ण विकास कर सकें। इस हेतु होवार्ड गार्डनर के बुद्धिमत्ता (Intelligence) का सिद्धांत समझना आवश्यक है। Howard gardner की Theory of multiple intelligence बहुविध बुद्धि के सिद्धांत के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के पास बुद्धि के 9 विभिन्न प्रकार होते हैं–

  * Linguistic Intelligence. मौखिक अथवा भाषिक
  * Logical-mathematical Intelligence. तार्किक गणितीय
  * Visual-spatial Intelligence. स्थानिक
  * Bodily-Kinesthetic Intelligence. शारीरिक गतिसंवेदी
  * Musical rhythmic Intelligence.लयात्मक
  * Interpersonal Intelligence. अंतवैयक्तिक
  * Intrapersonal Intelligence अंतरावैयक्तिक
  * Naturalistc Intelligence. प्रकृतिवादी

* Existential Intelligence. अस्तित्ववादी

## 2.5 बच्चे के सीखने की गति धीमी हो जाती है–

- कक्षा में उपयुक्त प्रकाश, हवा और स्वच्छता न होने पर।
- बैठक व्यवस्था उचित न होने पर।
- कक्षा और विद्यालय में बच्चों को सम्मान न मिलने पर।
- भययुक्त अनुशासन होने पर।
- प्रेरक और उद्दीप्त वातावरण न होने पर।
- अनम्य और कठोर समय सारणी होने पर।
- कक्षा में बोलने का एवं अभिव्यक्ति का अवसर न मिलने पर।
- बच्चों की जिज्ञासाओं और समस्याओं का समाधान न होने पर।
- बच्चों की अपनी भाषा और उनकी स्थानीय बोली को सम्मान न मिलने पर।
- विषय–वस्तु बच्चे के मानसिक स्तर के अनुकूल न होने पर।
- गृहकार्य की अधिकता होने पर।
- कक्षा में बच्चे के केवल निष्क्रिय श्रोता होने पर।
- शिक्षक के उदासीन भाव से पढ़ाने पर।
- विद्यार्थी को प्रशंसा या प्रेरणा न मिलने पर।
- शिक्षण में विविधता और चुनौतियाँ न होने पर।
- शिक्षण में शिक्षण अधिगम सामग्री का उपयोग न करने पर।
- पुस्तकालय का अभाव।
- बच्चों के मनोविज्ञान का ध्यान न रखने पर।
- बच्चों को मनोरंजन एवं खेल के अवसर उपलब्ध न होने पर।

- बच्चों की सक्रिय सहभागिता को प्राथमिकता न देने पर।
- मूल्यांकन का बच्चे के दृष्टिकोण से संचालित न होने पर।

## 2.6 सामाजिक, आर्थिक पृष्ठभूमि की विभिन्नता एवं क्षमताओं में समानता

शिक्षा को प्रासंगिक और सार्थक बनाने के लिए बच्चों की पृष्ठभूमि के वैविध्य अत्यंत महत्व रखते हैं। हमारे विद्यालय के बच्चे छत्तीसगढ़ की विविधता, जनजातीय बहुलता, सांस्कृतिक विभिन्नता एवं आर्थिक असमानता के परिवेश से आते हैं।

इस परिवेश के प्रभाव एवं क्षेत्रीय विभिन्नताओं को दृष्टिगत रखते हुए पाठ्यक्रम का संयोजन किया जाना है। ये प्रभाव संज्ञानात्मक योग्यता के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। अतः छात्रों में सामाजिक अंतः क्रिया को प्रोत्साहित करना जरूरी है। राष्ट्रीय लक्ष्यों तथा सामाजिक–सांस्कृतिक प्राथमिकताओं को बच्चों के गुणात्मक विकास के लिए आधार बनाया जा सकता है।

## 2.7 विशेष आवश्यकता एवं सुविधा वंचित बच्चों की शिक्षा

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों, छात्रों की आवश्यकताएँ भिन्न–भिन्न होती हैं जिन पर ध्यान दिया जाना होगा। इन बच्चों को संपूर्ण शाला अवधि में पाठ्यक्रम के आधार पर पर्याप्त अधिगम अनुभव प्राप्त करने के अवसर मिलने चाहिए। शिक्षकों को भी निष्ठापूर्वक ऐसे प्रयास करने होंगे जिनसे वे इन बच्चों से आत्मीय संबंध स्थापित कर सीखने हेतु उपयुक्त वातावरण बना सकें।

शिक्षक, शिक्षण सामग्री का निर्माण करें और अनुकूल स्थितियों की रचना करें। जिससे शाला के वास्तविक शिक्षण–अनुभवों के अवसरों से वंचित बच्चों को शैक्षणिक अनुभव मिल सके।

सुविधा–वंचित, विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को अन्य छात्रों के बराबर लाने की दृष्टि से पूरक एवं उपचारात्मक उपाय करना भी प्रासंगिक है।

इस समूह के अंतर्गत प्रमुख रूप से बालिकाओं की शिक्षा, सुविधा–वंचित समूहों के बच्चों की शिक्षा, विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा के साथ–साथ होनहार और प्रतिभावान बच्चों की शिक्षा का विशेष आयोजन किया जाना होगा, ताकि इन बच्चों में

सकारात्मक दृष्टिकोण एवं कौशलों का पोषण हो सके तथा वे साथ–साथ जीने की कला सीख सकें।

राज्य में आर्थिक पिछड़ेपन और आदिवासी बहुलता के कारण सुविधा–वंचित बच्चों की भी एक बड़ी संख्या है। इन बच्चों को शिक्षा के लिए अपने परिवार से सहयोग, प्रेरणा तथा गुणवत्तापूर्ण शिक्षा कैसे उपलब्ध करायी जाए ? यह एक महत्वपूर्ण चुनौती है।

हमारी पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकें इनके अनुकूल होनी चाहिए। बच्चों के पढ़ाई बीच में ही छोड़ देने का यह एक महत्वपूर्ण कारण है। इन सभी के बावजूद इन बच्चों में कुछ खास तरह की विशेषताएँ जैसे विपरीत परिस्थितियों में डटे रहना, अधिक साहसी, अधिक खोजी होने के साथ–साथ इनकी अध्ययन सम्बन्धी ज़रूरतें भी विशिष्ट होती हैं। इनकी विशेषताओं और जरूरतों की व्यापक विविधता को ध्यान में रखते हुए शैक्षिक कार्यक्रम बनाने होंगे।

विशेष शैक्षिक ज़रूरत वाले सभी बच्चों की नियमित स्कूलों तक पहुँच हो जिससे इन्हें समाज की मुख्य धारा के लिए तैयार किया जा सके। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को इस प्रकार नियोजित करना होगा कि इन बच्चों की विविध शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। शिक्षकों को ऐसी सकारात्मक कार्यनीति अपनानी होगी, जिससे असमर्थ समझे जाने वाले विद्याथियों सहित सभी बच्चों को शिक्षा का माहौल मिले।

प्रतिभाशाली और होनहार बच्चे की पहचान प्राथमिक स्तर पर ही करनी होगी। शैक्षणिक गतिविधियों के माध्यम से उनकी सृजनात्मकता और योग्यता का पोषण करना होगा। उपरोक्त सभी कार्यो में समुदाय एवं सामाजिक संस्थाओं की मदद भी ली जा सकती है।

## 2.8 ज्ञान–सृजन के लिए अध्यापन

बच्चे स्वयं ही खोज करके प्रमाण जुटा कर सीखते हैं और ज्ञान का सृजन करते हैं। अध्यापक या पाठ्यपुस्तक ज्ञान प्राप्त करने के एकमात्र साधन नहीं हैं। बच्चों को स्वयं के अनुभवों से, परिवार एवं समुदाय के अनुभवों से, पुस्तकालयों से और स्कूल के बाहर अन्य स्रोतों से ज्ञान की तलाश के लिए प्रेरित करना होगा।

शिक्षक शैक्षिक–योजना इस तरह बनाएँ कि बच्चे बतायी गयी चीज को सिर्फ दोहराएँ नहीं, बल्कि उनमें सोचने की क्षमता बढ़े और सीखी हुई चीजों को करके देखने का मौका मिले।

ज्ञान के सृजन, पुनः सृजन के लिए अनुभव के आधार पर भाषायी क्षमता, प्राकृतिक परिवेश और समुदाय के साथ अन्तःक्रिया की ज़रूरत होती है।

शिक्षक प्रत्येक विषय को ढंग से बच्चों के समक्ष रखने का निरंतर प्रयास करें। जिससे विद्यार्थियों को उद्दीप्त किया जा सके और विषय में उनकी रूचि उत्पन्न की जा सके।

शिक्षण के नवीन सृजनात्मक तरीके ढूँढना, विभिन्न स्त्रोतों से शैक्षिक सामग्री संकलित करना, विभिन्न विषयों की नवीन अवधारणाओं, नये अर्थो से स्वयं को समृद्ध करना एवं बच्चों का इस दिशा में मार्गदर्शन करना जिससे बच्चे अपने अनुभवों को ज्ञान से जोड़ सकें। हमें यह जान लेना ज़रूरी है कि शिक्षा के विभिन्न क्रियाकलापों के बारे में बच्चों की प्रतिक्रियाएँ भिन्न–भिन्न होती हैं। जो बच्चे कला, संगीत, नृत्य, कविता करना, नाटक, खेलों जैसे क्रियाकलापों के प्रति प्रबल रूप से आकर्षित होते हैं, उन्हें इन क्रियाकलापों को करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए।

बच्चों को उन प्रश्नों को उठाने की स्वतंत्रता भी हो और उनका उत्तर भी तत्परता से दिया जाए जो किसी निर्धारित पाठ्यक्रम से सम्बंधित न हो।

एक महत्वपूर्ण बात भी ध्यान में रखनी होगी कि बच्चे का विकास इस तरीके से किया जाना चाहिए कि उसके ज्ञान में वृद्धि हो जाने के बावजूद उसकी अपनी ताजगी, जिज्ञासा, विस्मय और खोज की भावना गुम न हो जाए। यह शिक्षक के कार्य का एक कठिन भाग है, जिसमें उसे सफल होना है ।

* * *

# 3 शिक्षा के विविध आयाम

शिक्षा के विविध आयाम हैं। वे आयाम इस प्रकार हैं– ज्ञान का क्षेत्र, स्वरूप व निर्माण की प्रक्रिया, शिक्षा क्रम के लिए उसे व्यवस्थित करने के आधार, मूल्य, रुझान, व्यक्तित्व के गुण, दक्षताएँ/कौशल का स्वरूप एवं विकास की प्रक्रिया, विभिन्न विषयों की प्रकृति व उनका पारस्परिक संबंध।

## 3.1 ज्ञान का क्षेत्र स्वरूप व निर्माण की प्रक्रिया

ज्ञान मानसिक शक्तियों की अंतःक्रिया का प्रतिफल है। ज्ञान के विकास के साथ–साथ बच्चे का अपने परिवेश को देखने का दृष्टिकोण बदलता है। वह अवलोकित वस्तुओं तथा अनुभवों का पूर्व अनुभव से सहसंबंध स्थापित करते हुए उनकी पहचान बनाने लगता है। तर्क के माध्यम से संबंधित विषय को जानने का प्रयास करता है तथा अन्य तथ्यों की जानकारी प्राप्त करने लगता है। इस प्रकार बच्चों में इन योग्यताओं के आधार पर अवधारणाओं की समझ विकसित होने लगती है। वह जो जानता है, उसका अपने जीवन में सफलतापूर्वक उपयोग भी कर सकता है। अवधारणाओं का नये संदर्भ में ज्ञान निर्माण करने की योग्यता विकसित हो जाती है। ज्ञानात्मक विकास आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है, बालक का व्यवहार परिमार्जित होता जाता है। अतः शैक्षिक प्रक्रिया ऐसी होनी चाहिए जिसकी सहायता से वह अपने परिमार्जित व्यवहार से नवीन परिस्थितियों से सामंजस्य स्थापित कर सके।

### 3.1.1 विषय–व्यवस्था व ज्ञान संरचना

ज्ञानात्मक विकास के अनुसार शिक्षाक्रम में विभिन्न विषयों का संयोजन किया जाता है। इनसे शिक्षार्थी में सूक्ष्म अवलोकन, वर्गीकरण, विश्लेषण व तार्किक आधार पर नियम बनाने की क्षमताओं का विकास होता है। भाषा अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। भाषा के बिना आज कुछ भी संभव नहीं है। भाषा से ही हम अपने परिवेश को समझते हैं। भाषा में हम जितने अधिक कुशल होंगे उतनी ही सहजता से हम अन्य विषयों में कुशलता हासिल कर सकेंगे। गणित में हम संख्याओं व स्थानीय मान आदि के अमूर्त रिश्तों को समझने का प्रयास करते हैं। विज्ञान अंततः अवलोकनों व उनके विश्लेषण पर आधारित है और उसमें हम प्रकृति के नियमों को समझने का प्रयास करते हैं। समाजशास्त्र का दायरा है सामाजिक व्यवस्था को समझना। इसी प्रकार हर विषय की अपनी एक अलग पहचान होती है। शिक्षार्थी के विकास के लिए आवश्यक है कि वह इन सब विषयों में प्रवीणता प्राप्त करे।

## 3.2 मूल्य

मूल्यों की शिक्षा बालक में निहित सर्वोत्तम तत्वों का विकास कर उसके व्यक्तित्व को पूर्णता की ओर ले जाने में सहायक होती है। शिक्षा के माध्यम से बालक में संवेदनशीलता तथा दूसरों की आवश्यकताओं की समझ विकसित होती है। शिक्षा व्यक्तिगत मूल्यों के साथ बालक में पर्यावरण की सुरक्षा संबंधी चेतना, अपनी परम्पराओं तथा सांस्कृतिक धरोहर के प्रति सम्मान के साथ देशभक्ति की भावना का विकास भी करती है। जो उसे समाज व राष्ट्र के लिए उपयोगी बनाती है।

वर्तमान व्यवस्था में संपूर्ण पढ़ाई का उद्देश्य बच्चे को सुविधा संपन्न बनाना है। प्राप्त की जाने वाली भौतिक सुविधाएँ असीमित हैं। इन सुविधाओं को जुटाने के लिए मनुष्य को किसी न किसी का ( प्रायः प्रकृति का) शोषण करना पड़ता है। परंतु क्या ये सुविधाएँ मनुष्य को हमेशा सुखी रखती हैं ?

आज मनुष्य सुविधाओं से ही सम्बंध और समझ तक पहुचने की कोशिश कर रहा है तथा ऐसी ही समझ की सहायता से समझदार कहला रहा है। परंतु हर बच्चा तो न्याय चाहता है, सत्य बोलना चाहता है और सही राह में चलना चाहता है तो फिर ये सारी संभावनाएँ मनुष्य में परिलक्षित क्यों नहीं होती ? यदि वर्तमान व्यवस्था से ऐसा नहीं हो रहा है तो हमें अन्य विकल्पों पर अवश्य ध्यान देना चाहिए जो बच्चों में मानवीय चेतना को विकसित कर सकें और मानवीय मूल्यों को स्थापित कर निरंतर सुख एवं संपन्नता से जीवन–यापन करने के लिए प्रेरित कर सकें, संपूर्ण विश्व में मानवता की पहचान बना सकें।

### 3.2.1 रुझान व व्यक्तित्व के गुण

ज्ञानात्मक विकास तथा स्वभाव के अनुरूप बालक में विभिन्न विषयों के लिए पृथक–पृथक झुकाव होता है जिसे उस विषय के प्रति बालक का रुझान कहते हैं। विषय–ज्ञान के साथ बालक में श्रम की प्रवृत्ति, तैयारी व अपनी रुझान पहचानने व अभिव्यक्त करने की योग्यता व क्षमता भी विकसित होती है। शिक्षा को अधिक लाभप्रद बनाने की लिए बालक के रुझान का ज्ञान अति आवश्यक होता है। इस आधार पर पाठ्यचर्या में ऐसे विषयों का समावेश करना होगा जो अलग–अलग रुझान वाले बालकों की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके। ज्ञान का विकास, मूल्य, चेतना, मूल प्रवृत्तियों व रुझान इत्यादि मिलकर बालक के व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं जो उसके सीखने की प्रक्रिया को आधार प्रदान करती हैं।

## 3.3 कौशल / दक्षताएँ

कौशलों / दक्षताओं को उन अपेक्षित योग्यताओं के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसकी कक्षा या स्तर विशेष के अंत में प्रत्येक बच्चे द्वारा प्राप्ति अपेक्षित हो। विभिन्न विषयों के शिक्षण के माध्यम से बालक की संज्ञानात्मक दक्षताओं का विक़ास किया जाता है। इनके अतिरिक्त बालक में अंतर्निहित क्षमताओं को उभारने का हर संभव प्रयास किया जाता है। ताकि वह समाज के लिए उपयोगी जीवन व्यतीत करने में सक्षम हो सके। उसमें उत्तरदायित्व पूर्ण सहभागिता, जीवन–कौशलों का विकास और चुनौतियों का सामना करने तथा समस्या–निवारण की क्षमता विकसित होती है।

सभी बच्चों को नियमित स्कूल आना काफी नहीं है। उनको स्कूल में जो सिखाया जा रहा है वह भी आना चाहिए। बच्चों का उद्देश्य सीखना होना चाहिए न कि परीक्षा पास करना। अच्छा जीवन जीने के लिए पाठ्यक्रम का ज्ञान काफी नहीं है। कुछ जीवन–कौशल हैं जो अच्छा जीवन जीने में हमारी मदद करते हैं। इनसे आम विश्वास भी बढ़ता है। इनमें से कुछ निम्नानुसार हैं–

* निर्णय लेने का कौशल
* विश्लेषण–कौशल
* तार्किक सोच का कौशल
* सृजन क्षमता का कौशल
* सकारात्मक सोच का कौशल
* योजना बनाने का कौशल
* दीर्घकालीन लक्ष्य तय करने का कौशल
* योजना क्रियान्यवन का कौशल
* समस्या का हल खोजने का कौशल
* सतत शिक्षा का कौशल
* समयबद्धता का कौशल

* स्वयं को समझने का कौशल
* दूसरों को समझने का कौशल
* संवाद कौशल
* विवाद सुलझाने का कौशल
* Negotiation का कौशल
* कठिन परिश्रम का कौशल
* अपनी क्षमता बढ़ाते रहने का कौशल
* अध्यात्म–कौशल

इन कौशलों के बिना मनुष्य की प्रगति संभव नहीं। हमारा उद्देश्य हो कि हमारे सभी बच्चे इन कौशलों को प्राप्त करें। इस हेतु योजनाबद्ध तरीके से कार्य करना होगा।

## 3.4 शिक्षा की सामग्री, शिक्षा की प्रक्रिया

प्रारंभिक स्तर के दौरान बच्चों के शारीरिक और मानसिक विकास में तीव्र गति से परिवर्तन होता है। उनकी जिज्ञासा प्रबल होती है, सृजनात्मक गतिविधियों में भी अधिक सक्रियता होती है। इसलिए बच्चों के शारीरिक और मानसिक विकास पर केन्द्रित विषयों का समायोजन ही हमारी प्राथमिकता होगी। जहाँ प्रथम स्तर में कक्षा 1 एवं 2 में भाषा, गणित, कार्यानुभव एवं पाठ्यसहगामी क्रियाओं का समावेश करते हैं। वहीं द्वितीय स्तर में कक्षा 3, 4, 5 में एक और विषय पर्यावरण अध्ययन को सम्मिलित करते हैं। इन दोनों स्तरों में विषयों को विस्तृत आधार देने का प्रयास किया गया है। उच्च प्राथमिक स्तर पर तीन भाषाओं के साथ गणित, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, पाठ्य सहगामी क्रियाएँ, कार्य की शिक्षा बढ़ते क्रम का विषय होती हैं।

### 3.4.1 विषय क्षेत्रों की प्रकृति एवं अन्य विषयों से संबंध

प्रारंभिक शिक्षा में शामिल किये गये सभी विषयों की प्रकृति अलग–अलग होती है। उसी के अनुरूप उन विषयों के माध्यम से बालक में भाषायी कौशल, आंकिक गणना व संक्रियाओं की क्षमता, वैज्ञानिक अभिवृत्ति और परिवेशीय योग्यता विकसित की जाती है। संज्ञानात्मक ज्ञान के विकास से बालक में बौद्धिक क्षमता का विकास होता है। यद्यपि विषय

की प्रकृति के आधार पर उनका वर्गीकरण किया जाता है, फिर भी विभिन्न विषयों का अंतः संबंध स्वाभाविक है।

## 3.4.1 पाठ और पुस्तकें

यशपाल समिति की रिपोर्ट के अनुसार प्रायः पाठ्यपुस्तकों का प्रमुख उद्देश्य बच्चों में चिन्तन और जिज्ञासा के विकास मे बजाय सूचनाओं और तथ्यों का संग्रह बन गया है। पाठ्यपुस्तकें सावधानीपूवर्क लिखि और नियोजित की गयी हों, जो बच्चों को केवल तथ्यात्मक जानकारी न देकर अंतः क्रिया के मौके दे। पुस्तकों में परिभाषाएँ और सूचनाओं का बोझ कम होगा तब शिक्षक को अवधरणाओं की समझ पर बल देने का अवसर उपलब्ध होगा पुस्तकें ऐसी हो जो बच्चों को पाठ से आगे ले जा कर उन्हें उनके परिवेश से जोड़ सकें।

## 3.4.2 बहुकक्षा, बहुस्तरीय शिक्षण (MGML)

छत्तीसगढ़ के शैक्षिक परिदृश्य में प्राथमिक स्तर पर एक शिक्षक को सामान्यतः एक ही समय में एक से अधिक कक्षाओं का अध्यापन करना होता है। साथ ही कक्षा में अध्यापित किये जाने वाले बच्चों का स्तर भी भिन्न–भिन्न होता है, जिसके कारण सीखने–सिखाने की प्रक्रिया बाधित होती है। परिणाम स्वरूप बच्चों की शैक्षिक गुणवत्ता में कमी आती है जिससे शिक्षा के प्रति बच्चों का रुझान कम होने लगता है, अंततोगत्वा कुछ बच्चे शाला त्याग देते हैं।

इस परिदृश्य में बहुकक्षा–बहुस्तरीय शिक्षण–पद्धति एक कारगर विकल्प साबित होगी। इस पद्धति में सीखने की प्रक्रिया में बच्चा स्वतंत्र रुप से प्रतिभागी होता है तथा स्वयं का मूल्यांकन करते हुए सुगमता पूर्वक वांछित कौशल को प्राप्त करता है। यदि किसी कक्षा में शिक्षक उपलब्ध नहीं है तब भी बच्चे के सीखने की प्रक्रिया निरंतर बनी रहती है। बच्चा लंबी अनुपस्थिति के बाद कक्षा में उपस्थित होता है तो वर्तमान शिक्षण पद्धति में, उसे पूरी कक्षा जिस स्तर पर है, उसी स्तर से ही सीखना होता है। जिसके कारण वह अन्य विद्यार्थियों से पिछड़ जाता है और पढ़ाई के प्रति उसकी रुचि धीरे–धीरे खत्म होने लगती है। किन्तु इस पद्धति में शामिल गतिविधियों से बच्चों में सामाजिक, सांस्कृतिक ज्ञान तथा वैज्ञानिक सोच का प्रादुर्भाव होता है साथ ही समुदाय भी विद्यालय से जुड़ता है। इसी प्रकार सीखने–सिखाने का एकमात्र स्रोत शिक्षक नहीं होता। बच्चा सहपाठी, समुदाय, परिवेश तथा स्वयं से भी सीखता है। राज्य शासन द्वारा MGML नीति का निर्धारण कर, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के केन्द्रीय भाव के क्रियान्वयन का प्रयास किया जा रहा है जिसमें –

- प्रत्येक बच्चे को अपनी गति से सीखने का अवसर/स्वतंत्रता होगी।

- बच्चों में स्वयं सीखने की क्षमता का विकास होगा।
- बच्चे सीखने की प्रक्रिया में परस्पर सहभागी बनेंगे।
- शिक्षक मार्गदर्शक/सुविधादाता की भूमिका का निर्वहन कर सकेंगे।
- बच्चों में सामाजिक, सांस्कृतिक ज्ञान तथा वैज्ञानिक सोच समृद्ध होगी।
- बच्चे ज्ञान को व्यावहारिक तरीके से अर्जित कर सकेंगे तथा अर्जित ज्ञान का व्यावहारिक उपयोग कर सकेंगे।
- सीखने की प्रक्रिया में समुदाय की सहभागिता भी सुनिश्चित होगी।
- बच्चों का विद्यालय के प्रति आकर्षण बढ़ेगा जिससे शैक्षिक गुणवत्ता में वृद्धि होगी।
- बच्चे स्व–मूल्यांकन कर सकेगें तथा परीक्षा के प्रति उनका भय समाप्त होगा।
- शिक्षकों के शिक्षण–कौशल का विकास होगा।
- शिक्षक अध्ययन व मूल्यांकन में आवश्यकता के अनुरूप तकनीक अपनाने हेतु स्वतंत्र होंगे।

बच्चों पर बस्ते का बोझ कम होगा साथ ही वे मानसिक दबाव से मुक्त होंगे।

* * *

# 4. ज्ञान का सृजन

शिक्षा का उद्देश्य क्या है? यदि सामान्य जनता की भाषा में सोचें तो शिक्षा प्राप्त करने के बाद नौकरी लगनी चाहिए। पालकों का यह भी कहना होता है कि पढ़े–लिखे युवाओं और अनपढ़ युवाओं के हाव–भाव, आचार–व्यवहार तथा पैसा कमाने की क्षमता में कोई अंतर नहीं होता । ऐसे में बच्चों को पढ़ाने (स्कूल भेजने ) का क्या मतलब है? इस प्रश्न का उत्तर शिक्षक, शिक्षा विभाग के अन्य लोग तथा अन्य पढ़े लिखे लोगों के पास भी नहीं होता । इस प्रश्न का उत्तर ज्ञान की सृजनात्मकता में छिपा हुआ है ।

ज्ञान के सृजन को अभी हमने उपयोगिता के सिद्वांत के रूप में देखा । सही शिक्षा वही है जो हमारे जीवन का स्तर ऊपर उठाए । अधिकांश लोग जीवन के स्तर को जीवन के आर्थिक स्तर के समतुल्य मानते हैं । अतः शिक्षा से आय उपार्जन में मदद मिलनी चाहिए अर्थात शिक्षा की उपयोगिता का महत्वपूर्ण पहलू आय उपार्जन है । शिक्षा का दूसरा पहलू है ''ज्ञान अर्जन''। ज्ञान अर्जन का सीधा संबंध अर्थ अर्जन से हो यह ज़रूरी नहीं। परंतु यह आवश्यक है कि ज्ञान अर्जन में जो सक्षम है वह अर्थ अर्जन कर ही लेगा । परंतु जो अर्थ अर्जन करना जानता है वह जरूरी नहीं कि ज्ञान अर्जन कर ले । इसलिए शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान अर्जन ही होना चाहिए। अर्थ–अर्जन उसका बोनस है या बाइ–प्रोडक्ट है ।

हम ज्ञान अर्जन कैसे करते हैं? जब पालने पर पड़ा छोटा बच्चा घुँघरू युक्त खिलौने को चबाता है तब वह खिलौने, स्वाद, नरम–कड़ा इत्यादि के बारे में ज्ञान अर्जन कर रहा होता है । पियाजे के अनुसार जब बच्चा उस खिलौने को हिलाता है तो वह उसकी आवाज के बारे में ज्ञान अर्जन कर रहा होता है । धीरे धीरे हिलाने से कैसी आवाज आती है? जोर से हिलाने से कैसी आवाज आती है? फेंक देने से कैसी आवाज आती है? पास फेंकने से कैसी आवाज आती है? दूर फेंकने से कैसी आवाज आती है? इसी ज्ञान अर्जन की कड़ी में जब बच्चा खिलौने को फेंकता है तब एक प्रयोग कर लेता है। अब वह दूसरे प्रयोग के लिए तैयार रहता है । परंतु खिलौना उससे दूर पड़ा हुआ होता है। उसे पाने के लिए वह रोता है । चूँकि अभी वह प्रयोग कर रहा होता है इसलिए माँ द्वारा खिलौना पकड़ा देने पर उसे वह फिर फेंकता है । प्रयोग की श्रृंखला में वह कई बार खिलौने को फेंकता है परंतु माँ चिड़चिड़ाती है, वह उसे बार–बार खिलौना नहीं देती। एक–दो बार देने के बाद बच्चे को कुछ अन्य तरीकों से चुप कराने का प्रयास करती है । माँ बच्चे के ज्ञान अर्जन में रोड़ा बनती है । यहाँ पर बच्चा ज्ञान का निर्माण कर रहा था । वह आवाज, स्वाद, कड़ा–नर्म, दूर–पास, धीमी–तेज का स्वयं का अर्थ उक्त प्रयोग के द्वारा तैयार कर रहा था । हम बच्चों के सामने गाते हैं –

**हिंद देश के निवासी, सभी जन एक हैं।**

**रंग रूप वेश–भाषा चाहे अनेक हैं।**

इसे सुनने के बाद यदि बच्चा मनन करे तो वह पाता है कि यह झूठ है। उसका अभी तक ज्ञान अर्जन इस वाक्य को मानने से मना करता है । अपने गाँव, मोहल्ले में ही वह जातिवाद, धर्मान्धता, आर्थिक विषमता, अन्याय, लिंगभेद सब देखते हुए बड़ा होता है इसलिए उसका पूर्व ज्ञान इसे पचा नहीं पाता । अतः यह पॉलीथीन के अंदर बंद दवाई के कैप्सूल को निगलने के बराबर है। हम जो दवाई खाते हैं उसका आवरण पेट के भीतर चंद मिनटों में घुल जाता है। इसलिए हम पर दवाई का असर होता है यदि आवरण नहीं घुला तो हम पर दवाई का कोई असर नहीं होगा और हमारी बीमारी दूर नहीं होगी । उल्टे वह कैप्सूल यदि विष्ठा के साथ बाहर नहीं निकला तो अन्य बीमारियाँ पैदा करेगा ।

हमारी शिक्षा द्वारा उक्त प्रकार का दिया जाने वाला कैप्सूल बच्चों के जीवन में कोई असर नहीं करता । इसलिए लिखे–पढ़े और अनपढ़ों में कोई खास अंतर नहीं दिखता । अंतर तो तब दिखेगा जब बच्चे इन वाक्यों का विश्लेषण करें। उनकी समाज की वास्तविकता से तुलना करें और फिर तय करें, दृढ़ निश्चय करें कि जब वे बड़े होगें तो स्वयं ऐसी असमानता निर्माण नहीं करेगें। उल्टे वह असमानताओं को दूर रखने के लिए क्रियाशील होगें । यदि उक्त वाक्यों को गाने के बाद इस प्रकार का ज्ञान सृजन नहीं होता तो उसका स्कूल आना बेकार है। स्कूल में बिताया हुआ समय बर्बाद, शिक्षकों को दिया गया वेतन बेकार तथा शिक्षकों के एक मानव के रूप में उस गाने पर व्यतीत समय निरर्थक । यदि हमारी शिक्षा–व्यवस्था इस प्रकार की शिक्षा दे रही है तो हम बहुत धन, बहुत से जीवन तथा राष्ट्र को बर्बाद कर रहे हैं । अतः ज्ञान का सृजन रटाने वाली शिक्षा–व्यवस्था के विपरीत है । ज्ञान का सृजन शिक्षा रूप कैप्सूल का वास्तविक जीवन में उपयोग चाहता है । जबकि रटाने वाली शिक्षा पॉलीथिन में पैक कैप्सूल की तरह है जिसे खा लेने पर भी बीमारी ठीक नहीं होगी । फिर आप कितने ही कैप्सूल खाएँ । अर्थात कितने ही विषय पढ़ें और कितनी ही परीक्षाएँ पास करें ।

हमने यह देखा कि हर व्यक्ति में ज्ञान–सृजन की क्षमता होती है । वह कैसे? कोई सोचेगा कि गाँव या गंदी बस्ती का बुद्धू व्यक्ति भी क्या ज्ञान का सृजन कर सकता है? इसके लिए हमें जानकारी या सूचना, और ज्ञान में अंतर समझाना आवश्यक है । सूचना तभी ज्ञान बनती है जब हम उस पर विश्वास करते हैं । विश्वास करने पर हम उसे अपने अनुभव के संसार में लाते हैं यदि हम किसी जानकारी को अनुभव–विश्व में लाने की हिम्मत नहीं रखते अर्थात उस पर विश्वास नहीं करते तो वह जानकारी मात्र रह जाती है । ऐसी जानकारी से कोई लाभ नहीं होगा।

ज्ञान अर्जन, अवधारणा निर्माण का एक संकलन है। वह आगमन तथा निगमन के सिद्धांत से बनता है inductive (निगमन) तथा deductive logic (आगमन) से बनता है । किसी बच्चे ने देखा कि पिता शराब पीता है, उसने देखा कि पड़ोस का पुरुष शराब पीता है, फिर उसने किसी और आदमी को देखा कि वह भी शराब पीता है उसने यह भी देखा कि दोस्त का भाई बड़ा हो गया वह भी शराब पीने लगा । अतः inductive logic से वह इस conclusion पर पहुँचेगा कि बड़े लोग शराब पीते हैं । यह उसकी अवधारणा बन जाती है, यह उसके ज्ञान का भाग बन जाता है। अतः ज्ञान अर्जन के लिए स्कूल, कॉलेज, शिक्षक या गुरु की आवश्यकता नहीं होती । मनुष्य है तो वह ज्ञान अर्जन करता ही है। जब वह बड़ा होगा तो deductive logic से वह पाएगा कि वह बड़ा हो गया है इसलिए उसे शराब पीना चाहिए, फिर वह पीने लगेगा । यदि शिक्षा प्रभावशाली है तो उसके ज्ञान अर्जन में और कुछ inductive logic जुड़ेंगे। कई बड़े लोग शराब नहीं पीते यह दिखाना होगा । जो शराब पीते हैं और शराब नहीं पीते उनके जीवन में अंतर दिखाना होगा । शराब पर होने वाले खर्च से बचत करके लाभदायी कार्यो की संभावना बतानी होगी । ऐसे कई उदाहरण बताने होंगे जब तक deductive logic से उसकी अवधारणा यह नहीं बन जाती कि शराब पीने से मेरा जीवन बर्बाद हो रहा है । ऐसा हुआ तभी शिक्षा उपयोगी है। उसके एवज में यदि वह शराब के दोषों पर अच्छा भाषणकर्ता बन जाता है परंतु शराब पीना जारी रखता है तो शिक्षा निरर्थक साबित होगी । अतः ज्ञान का सृजन नहीं हुआ।

बच्चा जब पैदा होता है तब उसे कोई भाषा नहीं आती है वह बच्चा जब स्कूल आता है तब वह कम से कम एक भाषा या बोली जानता है । वह बिना शिक्षक के, बिना स्कूल के ज्ञान अर्जन करता है । ज्ञान का सृजन करता है। स्कूल का उद्देश्य इस ज्ञान सृजन की प्रक्रिया को गतिशीलता प्रदान करना है । नई जानकारी यदि दी गई तो उसका भी उद्देश्य बच्चे के सृजन, ज्ञान में परिवर्तन लाना तथा ज्ञान–सृजन में गतिशीलता लाना ही होता है । इसलिए भाषा सिखाते समय बच्चा माँ को माँ कहना कैसे सीखता है? यह समझना आवश्यक होगा । 'माँ' शुरू के कुछ शब्दों में होगा जो बच्चा सीखता है इस शब्द को सीखने के पूर्व उसे कोई भाषा नहीं आती हो तब भी बच्चा भाषा सीखता है । कैसे? जब बिना भाषा जाने बच्चा भाषा सीख लेता है तब वही बच्चा अंग्रेजी सीखते समय एक भाषा का ज्ञान होते हुए भी कठिनाई महसूस करता है। क्यों? कहीं हमारा पढ़ाने का तरीका तो गलत नहीं? ज्ञान के सृजन constructivism का उपयोग करें। शायद अंग्रेजी सिखाना और सीखना दोनों आसान हो जाएँ ।

यदि मैं आपको 200 में से 188 घटाने के लिए कहूँ तो संभावना है कि 200 में से 188 न घटाएँ । आपका उत्तर अवश्य 12 आएगा। यह उत्तर सही है । परंतु उस उत्तर तक पहुँचने का तरीका स्कूल में पढ़ाये गए तरीके से भिन्न है। जब आप गणित हल करने के लिए

नए तरीके खोज सकते हैं तो आप वैज्ञानिक ही तो हुए । यकीन करें हमारे आसपास के सभी लोग भी ऐसे ही हैं। सभी वैज्ञानिक हैं, सभी ज्ञान का सृजन करते हैं, बच्चे भी। उक्त घटाने के उदाहरण को हल करते समय लोग कई तरीके अपनाते हैं उनमें से कुछ निम्नानुसार हैः–

1. 188 से 200 तक पहुँचना है, 188 में 100 तो पहले ही है इसलिए अब 88 से 100 तक पहुँचना है । पहले 90 तक पहुँचे तो 2 की दूरी तय की उसके बाद 90 से 100 तक पहुँचने के लिए 10 की दूरी तय की। इसलिए 2 में 10 मिलाकर 12 की दूरी तय की, अतः उत्तर 12 है।

2. कुछ लोग 200 से 188 तक उतरते हैं दोनों में 100 तो है ही इसलिए केवल 100 से 88 तक उतरना है । पहले 100 से 90 तक उतरे फिर 90 से 88 तक अतः 10 अधिक 2 बराबर 12 उत्तर है ।

ध्यान रहे स्कूल में इनमें से कोई भी तरीका नहीं बताया गया है। गणित के घटाने के प्रश्न को जोड़ने के प्रश्न में बदलना तो हमने स्वयं सीखा। हम ही ने तो किया प्रश्न हल करने के तरीके के ज्ञान का सृजन । बच्चों की इस शक्ति का उपयोग यदि स्कूल शुरू से करें तो बच्चे में तार्किक क्षमता, विश्लेषण क्षमता, समस्याओं का हल खोजने की क्षमता, सृजनशीलता इत्यादि बढ़ेगी। ये सभी जीवन कौशल हैं । शिक्षा का असली उद्देश्य भी यही है, तब दिखेगा पढ़े–लिखे और अनपढ़ लोगों में अंतर । तब भेजेंगे गरीब लोग भी अपने बच्चों को स्कूल। तब होगी हमारे समाज से गरीबी दूर । इसलिए ज्ञान–सृजन पद्धति (constructivism) स्कूलों में आवश्यक है । अतः राज्य की पाठ्यचर्या का यह अभिन्न अंग होगा । शिक्षक–प्रशिक्षण फिर वह चाहे सेवापूर्व या सेवांतर्गत हो उसमे भी constructivism लाना अनिवार्य होगा।

* * *

# 5. शिक्षाक्रम की संरचना

**5.00**

विद्यालयीन पाठ्यचर्या के द्वारा हमें शिक्षार्थियों को ज्ञान अर्जित करने, समझ और कौशलों को विकसित करने में सक्षम बनाना है। सकारात्मक एवं समालोचनात्मक दृष्टिकोण अपनाने और व्यक्तित्व के समग्र विकास के लिए उपयोगी मूल्यों और आदतों को अपनाने में सक्षम बनाना है।

## 5.1 शिक्षा के सामान्य उद्देश्य

5.1.1 शिक्षा का उद्देश्य शिक्षार्थियों में उन आदतों, अभिवृत्तियों तथा चारित्रिक गुणों का विकास करना है, जो उन्हें लोकतांत्रिक समाज के जिम्मेदार नागरिक के रूप में विकसित होने में सहयोग करें। लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में भागीदारी के साथ सामाजिक बदलाव में हिस्सा लेने का भाव विकसित करें।

5.1.2 शिक्षा द्वारा छात्रों में साहित्यिक, कलात्मक एवं सांस्कृतिक अभिरुचियों का विकास करना जो उनके व्यक्तित्व का विकास कर उन्हें आत्माभिव्यक्ति का अवसर प्रदान करें।

5.1.3 शिक्षा के माध्यम से शिक्षार्थी में उद्यमशीलता, श्रम के प्रति सम्मान एवं श्रम की महत्ता की समझ विकसित करना है। जो शिक्षार्थी को आर्थिक रूप से सक्षम बनाने के अवसर प्रदान करने के साथ ही राष्ट्र की आर्थिक स्थिति को मज़बूत करने में उसकी भागीदारी सुनिश्चित करेगी। इसके लिए कार्य की शिक्षा का समावेश अति आवश्यक है।

5.1.4 प्राथमिक स्तर पर व्यक्तिगत स्वच्छता एवं परिवेश की स्वच्छता एक महत्वपूर्ण अवयव होगा जिसके प्रति बच्चों में स्वस्थ और उचित आदतों का विकास करना होगा, बच्चे स्वयं की देखभाल, परिवेश की सफाई के साथ–साथ शौचालयों की सफाई के प्रति भी सजग हों।

5.1.5 शिक्षा द्वारा बालकों में खोजी प्रवृत्ति, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, जिज्ञासा, परिकल्पना, अवलोकन व प्रयोग द्वारा ज्ञानार्जन, समस्या समाधान आदि कौशल विकसित करना है।

5.1.6 प्राकृतिक व कलात्मक सौंदर्यबोध के साथ नवसृजन के गुणों का विकास करना है, जिससे वह समाज के लिए उपयोगी बन सके।

5.1.7 प्रदेश में प्रचलित सांस्कृतिक एवं सामाजिक विविधताओं के प्रति संवेदनशीलता का विकास करना है, जिससे वह अपनी विरासत पर गर्व कर सके, कक्षा की गतिविधि को भविष्य के अभीष्ट परिणाम से जोड़ सके।

5.1.8 शिक्षा के द्वारा समाज में व्याप्त गरीबी, अंधविश्वास, जातिगत व लैंगिक असमानता, अन्याय की प्रवृत्ति आदि के कारणों को समझते हुए उनमें कमी करने का प्रयास करने की भावना का विकास करना है।

5.1.9 शिक्षा के द्वारा पारस्परिक सद्भाव, भ्रातृत्व तथा विश्वबंधुत्व की भावना का विकास करना है।

5.1.10 शिक्षा के द्वारा समय की नियमितता, स्वच्छता, सत्य–अहिंसा व सहिष्णुता, न्यायप्रियता, जुझारूपन, सेवाभाव, सामूहिक कार्यों में सहभागिता आदि मूल्यों का विकास करना है।

5.1.11 शिक्षा के द्वारा आधुनिक भारत के निर्माण में स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों, समाज सुधारकों, वैज्ञानिकों तथा कलाकारों आदि के योगदान और उनके मूल्यों के प्रति सजगता का विकास करना है।

5.1.12 शिक्षार्थी में राष्ट्रीय प्रतीकों का सम्मान करना, ऐतिहासिक स्थलों व स्मारकों की सुरक्षा, पर्यावरण संरक्षण के प्रति संवेदनशीलता का विकास करना होगा।

5.1.13 शिक्षार्थियों को नवोदित छत्तीसगढ़ राज्य के सर्वांगीण विकास की आवश्यकताओं, समस्याओं और सरोकारों को समझकर उनका हल ढूँढने व समाधान करने में सक्षम बनाना होगा।

## 5.2 अध्ययन योजना

समस्त शालेय गतिविधियों–प्रार्थना से लेकर विषयों का अध्ययन–अध्यापन, पाठ्य सामग्री, गतिविधियाँ, सांस्कृतिक क्रियाकलाप, खेलकूद और व्यायाम के माध्यम से उपरोक्त उद्देश्य प्राप्त किये जाएँगे। प्रत्येक विषय के अध्ययन में उससे संबंधित विषय–वस्तु के साथ–साथ विभिन्न व्यक्तिगत कौशलों और मूल्यों का एकीकृत रूप में विकास किया जाएगा।

## 5.2.1 प्रारंभिक शिक्षा

### प्राथमिक स्तर (5 वर्ष)

प्राथमिक स्तर को दो भागों में विभाजित किया जाएगा। प्रथम भाग में कक्षा पहली व दूसरी की शिक्षा दी जाएगी। जहाँ शिक्षार्थी को औपचारिक शिक्षण से परिचित कराया जाएगा। दूसरे भाग में कक्षा तीसरी से पाँचवी का अध्ययन रखा गया है। इस स्तर पर शिक्षार्थी व्यवस्थित ढंग से ज्ञानार्जन करना सीखेंगे। प्राथमिक स्तर पर अध्यापन की विषय संरचना निम्नलिखित है–

**कक्षा पहली व दूसरी–**

1. प्रथम भाषा
2. द्वितीय भाषा
3. गणित
4. पाठ्य सहगामी क्रियाएँ
5. कार्यानुभव

उपरोक्त विषयों में पर्यावरणीय शिक्षा भी सम्मिलित है।

**कक्षा तीसरी से पाँचवी–**

1. प्रथम भाषा
2. द्वितीय भाषा
3. गणित
4. पर्यावरण अध्ययन
5. पाठ्य सहगामी क्रियाएँ
6. कार्यानुभव

भाषा–शिक्षण के द्वारा बालक में सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना, समझना जैसे मूल कौशलों का विकास होगा। उच्चारण के निर्धारित मापदंडों पर विशेष ध्यान दिया जाएगा।

इसी प्रकार सुवाच्य लेखन व सही वर्तनी अवबोध के साथ अनुकरण–वाचन की क्षमता विकसित होगी। भाषा–शिक्षण का मुख्य उद्देश्य यह होता है कि विद्यार्थी धीरे–धीरे भाषा के मौखिक व लिखित पक्ष को समझकर प्रयोग कर सके।

एक तरफ घर की भाषा, सहकर्मी समूह की भाषा तथा आस–पास की भाषा तथा दूसरी तरफ विद्यालय की भाषा के बीच एक पुल बनाने के हर संभव उपाय किये जाने चाहिए।

गणित–शिक्षण के द्वारा कक्षा पहली व दूसरी के बच्चों को पहले आकार, लम्बाई, भार आदि की अवधारणा के साथ–साथ अंकों की अवधारणा से परिचित कराया जाएगा। पूर्व ज्ञान का उपयोग वर्गीकरण, समूहीकरण एवं क्रमबद्ध सोच विकसित करने के लिए किया जाएगा। जोड़–घटाने की दक्षता भी मज़बूत की जाएगी। कक्षा तीन से पाँच में जोड़, घटाना, गुणा, भाग करना और इनसे जुड़ी संगणनात्मक क्रियाओं के लिए संख्याओं और भिन्नों की अवधारणा की स्पष्टता भी आवश्यक है। लंबाई, भार, क्षमता, मुद्रा, समय, क्षेत्रफल, आकार आदि के बारे में अवधारणायें उनके मापन की इकाइयों के साथ विकसित करनी होंगी। साथ ही अंक–गणितीय प्रक्रियाओं का सरल प्रयोग एवं ज्यामितीय आकृतियों एवं रचनाओं के प्रति भी बच्चे की समझ विकसित की जाएगी। जिसके द्वारा बच्चों में तार्किक सोच तथा गणितीय क्रियाओं का दैनिक जीवन में उपयोग करने की क्षमता का विकास होगा।

प्राथमिक स्तर पर पर्यावरण अध्ययन अभिन्न अंग है। प्रथम दो वर्षों में बच्चों को अपने आस–पास के पर्यावरण से जुड़ी यथार्थता के माध्यम से विज्ञान–शिक्षण कराया जाएगा। विशेष रूप से ज्ञानेन्द्रिय को सक्रिय बनाने संबंधी क्रियाओं, परिवेश और पर्यावरण का अवलोकन, खोज करने की प्रवृत्ति एवं निष्कर्ष निकालने की योग्यता विकसित करनी होगी।

कक्षा तीन से पाँच में पर्यावरण शिक्षण, अनुभवों एवं क्रियाकलापों पर आधारित होगा। इन अनुभवों तथा प्रक्रियाओं के आधार पर बच्चों में उनसे और अपने पर्यावरण के प्रति सकारात्मक चेतना एवं संवेदनशीलता का विकास होगा। साथ ही बच्चों में अपने पर्यावरण के साथ वैज्ञानिक ढंग से अंतःक्रिया की क्षमता का विकास भी होगा। कक्षा तीन से पाँच में प्राकृतिक और सामाजिक तत्व पर्यावरण अध्ययन में ही रखे गये हैं। बच्चों को घर, शाला और आस–पड़ोस से आरंभ कर जिला, राज्य और देश से भी परिचित कराया जाएगा। इस स्तर पर बच्चों में दूसरों के साथ सहयोग करना, दूसरों की समस्याओं के प्रति संवेदनशीलता, समस्या–निवारण के लिए नेतृत्व–कौशल का विकास किया जाएगा।

पाठ्य सहगामी क्रियाओं का संयोजन सर्वांगीण विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है। कक्षा 1 से 5 के लिए उन गतिविधियों का आयोजन किया जाएगा, जिससे प्रत्येक बच्चे में अच्छी आदतों के साथ स्वास्थ्य व स्वच्छता की समझ तथा कलात्मक अभिरुचि का विकास होगा।

कार्यानुभव को उद्देश्यपूर्ण और सार्थक मानवीय श्रम मानकर शिक्षा के सभी स्तरों पर एक आवश्यक तत्व के रूप में सुनियोजित व श्रेणीबद्ध क्रियाकलापों के माध्यम से शामिल किया जाएगा। इस क्षेत्र में दक्षता–विकास के अंतर्गत ज्ञान, समझ, व्यावहारिक कौशल, मूल्य एवं आवश्यकता आधारित जीवन क्रियाएँ प्रमुख हैं।

## 5.2.2 उच्च प्राथमिक स्तर ( 3 वर्ष)

इस स्तर में कक्षा 6 से 8 तक की शिक्षा प्रदान की जाएगी। शिक्षार्थी, परिवार के विकासशील सदस्य के रूप में अपनी पहचान बनाते हुए विद्यालय तथा समाज के सभी कार्यों में सक्रिय योगदान करने में सक्षम होगा। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्यापन की विषय संरचना निम्नलिखित है–

- प्रथम भाषा
- द्वितीय भाषा
- तृतीय भाषा
- गणित
- विज्ञान और प्रौद्योगिकी
- सामाजिक विज्ञान
- पाठ्य सहगामी क्रियाएँ
- कार्यानुभव

### भाषा

छत्तीसगढ़ एक बहुभाषी तथा बहुसांस्कृतिक विशेषताओं वाला राज्य है। जहाँ विविध माध्यमों में प्रारंभिक शिक्षा दी जाती है। विस्तृत समूह में शिक्षा का माध्यम तथा प्रथम भाषा के रूप में हिन्दी का अध्यापन किया जाता है। चूँकि राज्य में अल्पसंख्यक समुदाय के

रूप में उर्दू भाषी लोग भी निवास करते हैं। अतः उनके द्वारा शिक्षा के माध्यम तथा प्रथम भाषा के रूप में उर्दू का अध्यापन किया जाता है। हिन्दी माध्यम के विद्यालयों में द्वितीय भाषा के रूप में अंग्रेजी और जिन विद्यालयों में अंग्रेजी तथा उर्दू माध्यम से अध्यापन होता है, वहाँ द्वितीय तथा तृतीय भाषा के रूप में अन्य दो भाषाओं का अध्यापन किया जाता है।

उच्च प्राथमिक स्तर पर बालक के ज्ञानात्मक विकास के साथ–साथ संवेगात्मक व सामाजिक गुणों का भी विकास होता है। भाषा की कमज़ोर पृष्ठभूमि सभी क्षेत्रों में शिक्षार्थी की योग्यता को प्रभावित करती है।

भाषा एक ऐसा सशक्त साधन है जो उनमें स्वतंत्र चिंतन, कुशल अभिव्यक्ति तथा तार्किक विश्लेषण आदि कौशलों को विकसित करता है। जिसके माध्यम से बालक में सृजनात्मकता, कल्पनाशीलता को अभिव्यक्ति मिलती है।

उच्च प्राथमिक स्तर पर छात्रों की तीन भाषाओं में क्षमताओं पर विशेष ध्यान देना होगा। जिससे वे दैनिक जीवन में उनका प्रयोग कर सकें। प्रथम भाषा में साहित्य के रूपों से उनको अवगत कराना होगा। वे जो कुछ भी पढ़ते या सुनते हैं उस पर मौखिक या लिखित रूप से उन्हें प्रतिक्रिया देने लायक बनाना होगा। भाषा के व्यावहारिक पक्ष, अलंकारिक आयामों और व्याकरण का भी इस स्तर पर अध्ययन आवश्यक है। जिसके द्वारा भाषा की प्रकृति, संरचना, क्रियाओं के प्रति अंतर्दृष्टि का विकास होगा। कहानी, कविता, गीतों और नाटकों के माध्यम से बच्चों के लिए ऐसी सामग्री उपलब्ध करानी होगी जिससे वे अपने सांस्कृतिक धरोहर से जुड़ाव का अनुभव कर सकें।

## गणित

विद्यालयों में गणित पढ़ाने का उद्देश्य शिक्षार्थी में अपने आस–पास के अनुभवों की पुष्टि का कौशल विकसित करना है। इसलिये ज्यामितीय आकृतियों एवं संख्याओं के साथ प्रयोग करना, परिकल्पनाएँ करना और अवलोकन के माध्यम से उनकी पुष्टि करना इत्यादि गणित सीखने–सिखाने के महत्वपूर्ण अंग होंगे।

उच्च प्राथमिक स्तर पर दैनिक जीवन के लिये आवश्यक गणित को महत्व देना होगा। छात्र को तथ्यों, अवधारणाओं, दैनिक उपयोग के गणितीय सिद्धांतों, व्यावहारिक ज्यामिति, क्षेत्रमिति, सांख्यिकी के वर्णात्मक प्रारंभिक क्षेत्रों एवं बीजगणित की बुनियादी अवधारणाओं का ज्ञान एवं समझ उत्पन्न करनी होगी। उसे मौखिक/मानसिक गणित के लिये भी प्रोत्साहित करना होगा ताकि वह दैनिक जीवन की समस्याओं को सही ढंग से पढ़ना, हल करना, मॉडल तैयार करना सीख सके। उसके मापने के कौशलों को भी विकसित करना होगा। सांख्यिकी, संक्रियायें, माप, दशमलव और प्रतिशत के संबंध में स्पष्ट समझ

विकसित करनी होगी जिससे वे गणितीय ढंग से सोच सकें व तर्क कर सकें। मान्यताओं के तार्किक परिणाम निकाल सकें और अमूर्त के संबंध में समझ बना सकें। हमें उच्च लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साधनों को विकसित करना होगा।

इस स्तर पर विद्यार्थी बीजगणितीय संकेतों से परिचित भी होते हैं। स्थान और आकारों की समस्याएँ हल करना सीखते हैं एवं सामान्यीकरण से उनका माप संबंधी ज्ञान पुष्ट होता है।

चूँकि गणित माध्यमिक स्कूल तक अनिवार्य विषय है अतः अच्छी गणित शिक्षा का अधिकार प्रत्येक बच्चे को है। इस शिक्षा को सहज बनाने के लिए गणित शिक्षा का दर्शन इस प्रकार होगा–

- सभी बच्चे गणित से भयभीत होने की बजाय उसका आनंद उठायें।
- बच्चे गणित को ऐसा विषय मानें जिस पर वे बात कर सकते हैं, जिससे संप्रेषण हो सकता है, आपस में जिस पर चर्चा कर सकते हैं।
- विद्यार्थी गणित विषय में सार्थक समस्याएँ उठायें और उन्हें हल करें।
- अंकगणित, बीजगणित, रेखागणित, त्रिकोणमिति की मूल संरचना को बच्चे समझें, इनका प्रयोग कथनों की सत्यता और असत्यता को लेकर तर्क करने में कर सकें।
- शिक्षक कक्षा में प्रत्येक बच्चे के साथ इस विश्वास के आधार पर काम करें कि प्रत्येक बच्चा गणित सीख सकता है।
- समस्या समाधान की अनेक समान्य युक्तियों से भी बच्चों को परिचित कराना होगा जैसे– अमूर्तता, सादृश्यता, स्थिति विश्लेषण, समस्या को सरल रूप में बदलना, अनुमान लगाना उसकी पुष्टि करना।
- बच्चे को गणित के अन्वेषणात्मक नियमों से भी परिचय कराने की आवश्यकता होगी।

## विज्ञान

विज्ञान मानव में निहित जिज्ञासा और अपनी आवश्यकता–पूर्ति करने की क्षमता के प्रति सृजनात्मक प्रतिक्रिया है।

प्राथमिक स्तर पर विद्यालयों में विज्ञान की पाठ्यचर्या इस तरह हो कि विद्यार्थी में अपने पर्यावरण के प्रति जो स्वाभाविक जिज्ञासा है, उसे पोषण मिले।

विद्यार्थी इस तरह की गतिविधियों में व्यस्त रहें, जिससे सूक्ष्म अवलोकन, वर्गीकरण, निर्माण, अनुमान और मापन जैसे कौशल विकसित हों।

बोलना, पढ़ना, लिखना जैसी मूल भाषायिक दक्षताएँ/कौशल विज्ञान के लिए ही नहीं बल्कि विज्ञान के माध्यम से विकसित हों।

इस स्तर पर विज्ञान और सामाजिक विज्ञान को पर्यावरण अध्ययन में समाहित करना, जिसमें स्वास्थ्य और स्वच्छता भी महत्वपूर्ण अंग हो।

उच्च प्राथमिक स्तर पर बच्चे विज्ञान प्रौद्योगिकी और मानवीय उद्यम के बीच के संबंधों को पहचानने लगते हैं। समस्या–समाधान एवं निर्णय लेने के क्रियाकलापों में निहित प्रक्रियाओं को जानने लगते हैं। समस्या–समाधान एवं निर्णय लेने में सक्षम हो जाते हैं। वे कार्य–कारण संबंध और संरचना, कार्य संबंधों को समझने लगते हैं।

छात्रों पर वैज्ञानिक जानकारियाँ थोपने की बजाय उन मुख्य अवधारणाओं से अवगत कराया जाए जो विज्ञान और प्रौद्योगिकी से संबंधित हैं। इससे उनमें जिज्ञासा पैदा होगी और उनकी चेतना और समझ का विस्तार होगा। स्थानीय संसाधनों के द्वारा उपकरण तैयार करने, प्रयोगों की रचना करने और वैज्ञानिक अवधारणाओं को समझने में छात्र सक्षम हो सकेगा। प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर भी आवश्यक बल दिया जाएगा। छात्र में प्राकृतिक संतुलन, वायु, जल, ऊर्जा के संबंध में समझ विकसित होने के साथ–साथ स्वास्थ्य–पोषण एवं परिवार कल्याण के प्रति चेतना भी विकसित होगी।

## सामाजिक विज्ञान

सामाजिक विज्ञान विषय, शिक्षण के समस्त विषयों की सामान्य शिक्षा का एक महत्वपूर्ण भाग है। यह शिक्षार्थियों को समाज के प्रभावी, सहयोगी और उपयोगी सदस्य बनने के लिए आवश्यक ज्ञान, कौशल और आत्मविश्वास के लिए सही दृष्टिकोण प्रदान करता है। सामाजिक विज्ञान की विषय–वस्तु का चयन मुख्य रूप से भूगोल, इतिहास, राजनीति शास्त्र जैसे विषयों से किया जाना है। सामाजिक विज्ञान की पाठ्यचर्या की रचना छात्रों के लिए वैश्विक ढंग से सोचने तथा स्थानीय रूप से कार्यों में समन्वय करने में सहायक होगी। इस विषय की शिक्षा को सार्थक, प्रासंगिक और प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक सामाजिक सरोकारों का भी ध्यान रखा जाएगा।

सामाजिक विज्ञान के अध्ययन से विद्यार्थियों की बौद्धिक जानकारी के साथ–साथ सामाजिक कौशलों जैसे आलोचनात्मक चिंतन, तालिकाओं, आरेखों और मानचित्रों को पढ़ना और उनकी व्याख्या करना इत्यादि का विकास होगा। साथ ही मानवीय और राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्यों के विकास को भी प्रोत्साहन मिलेगा। राष्ट्रीयता की भावना, सांप्रदायिक सद्भाव और सामाजिक समन्वय भी स्थापित होगा। उत्सवों, पारंपरिक वेशभूषाओं, लोक–संस्कृति, स्थानीय संस्कृति आदि के प्रति गर्व एवं आदर की भावना विकसित होगी। प्राचीन काल तथा वर्तमान समय के रहन–सहन, समुदाय, देश–प्रदेश के सुप्रसिद्ध व्यक्तियों जिनका लोक–जीवन के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान रहा है, को भी शामिल किया गया है।

सामाजिक विज्ञान इस दायित्व को वहन करता है कि स्वतंत्रता विश्वास परस्पर सम्मान और विविधता का आदर जैसे माननीय मूल्यों का सुदृढ़ आधार तैयार हो।

सामाजिक विज्ञान के शिक्षण का लक्ष्य विद्यार्थियों में आलोचनात्मक मानसिक एवं नैतिक क्षमता का विकास होना चाहिए। ताकि वे उन सामाजिक शक्तियों से सावधान रह सकें जो इन मूल्यों को खतरा पहुँचाती हैं।

''शिक्षा बिना बोझ के (1993) की अनुशंसाओं को फिर से रेखांकित कर इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि अवधारणाओं की समझ और सामाजिक–राजनीतिक यथार्थ के विश्लेषण की क्षमता का विकास हो न कि केवल बिना व्याख्या के तथ्यों को रटने पर बल हो।''

## 5.2.3 सांदर्भिकता तथा स्थानीय विशिष्टता

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में स्थानीय सांदर्भिकता और विशिष्टता होनी चाहिए। स्थानीय विशिष्ट इतिहास, स्थानीय विशिष्ट भूगोल, स्थानीय वातावरण पर ज़ोर दिये जाने की जरूरत है। बच्चे को स्थानीय वातावरण (भौतिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक) की शिक्षा दी जाए। गणित, भाषा तथा पर्यावरणीय अध्ययन का उदाहरण स्थानीय होना चाहिए। जनजातीय क्षेत्रों में शिक्षण–अधिगम के उदाहरण जनजातीय संस्कृति अर्थव्यवस्था तथा स्थितियों से लिए जायें। स्थानीय चीजें सीखने का एक स्वाभाविक स्रोत हैं। स्थानीय परिवेश, केवल भौतिक तथा प्राकृतिक संसार ही नहीं होता बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक भी होता है। स्थानीय कहानियाँ, चुटकुले, पहेलियाँ तथा कलाएँ स्कूलों में भाषा तथा ज्ञान को समृद्ध बनाते है। स्थानीय ज्ञान और पद्धतियों के बारे में जागरूक होने की आवश्यकता है। इस ज्ञान को जहाँ ज़रूरत हो, स्कूली ज्ञान से भी जोड़ना होगा। व्यापक–ज्ञान को प्रासंगिक तथा अर्थवान बनाने के लिये विद्यालय के ज्ञान को स्थानीय ज्ञान से जोड़ा जाना ज़रूरी है।

## 5.3 पाठ्य सहगामी क्रियाएँ

पाठ्यचर्या में विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। इसके लिए पाठ्यचर्या में पाठ्य सहगामी क्रियाओं को समावेशित करना होगा। यह बच्चों में सृजन और आत्मविश्वास जैसे गुणों के द्वारा उनके संपूर्ण व्यक्तित्व के विकास में भी सहायक होगा। ये क्रियाएँ बच्चों में सामाजिकता के गुणों के विकास में सहायक होगी। जिससे वे समाज और राष्ट्र के लिए समर्पित तथा सहयोगी नागरिक के रूप में विकसित होंगे।

कक्षा 1 व 2 के लिए ऐसी गतिविधियों का आयोजन किया जाएगा जिससे प्रत्येक बच्चे में अच्छी आदतों का विकास होगा।

कक्षा 3 से 5 में स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा छात्र–छात्राओं और समुदाय के सम्पूर्ण स्वास्थ्य से संबंधित होगी। खेलकूद को महत्वपूर्ण स्थान देना होगा।

कक्षा 6 से 8 में छात्रों की रुचि के अनुरूप गतिविधियों का समावेश किया जाएगा। व्यक्तिगत एवं सामुदायिक स्वास्थ्य से संबंधित ज्ञान व क्रियाकलापों के माध्यम से जागरूकता पैदा करनी होगी।

## 5.4 कार्य–अनुभव (कार्य और शिक्षा)

शिक्षा–व्यवस्था के सामने सबसे बड़ी चुनौती यह है कि हम शिक्षा–व्यवस्था में ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करें कि विद्यालय का ज्ञान परिवेश में जा कर हुनर/कौशल का रूप ले ले। स्कूली ज्ञान और काम के बीच एक रिश्ता कायम हो। इसके लिए प्राथमिक स्तर पर ही बच्चों को उकसाना होगा कि वे अपना लक्ष्य निर्धारित करें। बच्चों को भविष्य के लिए सपने बुनना और उन्हें साकार करने हेतु, कुछ बनने हेतु प्रेरित करना होगा। महात्मा गांधी का शैक्षिक दर्शन, शिक्षा प्रणाली में कठिन परिश्रम और काम के साथ सीखने की संस्कृति का विकास करना पाठ्यचर्या का प्रमुख सरोकार है। इससे ज्ञानार्जन और उत्पादन साथ–साथ जुड़ेंगे।

उच्च प्राथमिक स्तर पर छात्र इतने परिपक्व हो जाते हैं कि कुछ कौशलयुक्त कार्य गंभीरतापूर्वक कर सकते हैं। अतः मुख्य कार्य–श्रेणियाँ निम्नानुसार हो सकती हैं–

1. सामुदायिक स्वास्थ्य एवं स्वच्छता।
2. पारिवारिक सदस्य के रूप में घरेलू कार्य।

3. कक्षा और विद्यालय में किये जाने वाले विभिन्न क्रियाकलाप।

4. समुदाय के कार्य जो निःस्वार्थ सेवा पर केन्द्रित हों।

5. व्यावसायिक विकास, उत्पादन, सामाजिक उपयोगिता से जुड़े कार्य।

बच्चों की आयु व योग्यता को ध्यान में रखकर तैयार किया गया उपयोगी काम उनके लिए मूल्यों, बुनियादी वैज्ञानिक अवधारणाओं, कौशलों और रचनात्मक अभिव्यक्ति के कारक के रूप में काम करता है। बच्चे काम के द्वारा अपनी एक अस्मिता पाते हैं और स्वयं को उपयोगी और महत्वपूर्ण समझते हैं। इसके माध्यम से वे समाज का हिस्सा बनते हैं और ज्ञान के निर्माण में सक्षम हो पाते हैं।

## 5.5 कला, शिल्प और संस्कृति

प्रदेश, कला और शिल्प के संदर्भ में अद्वितीय है। लोकगीत, लोकनृत्य, लोकनाट्य, चित्रकला, मूर्तिकला, काष्ठकला, हस्तशिल्प, धातुशिल्प, रंगमंच, प्रदेश की समृद्ध परम्पराएँ हैं, विरासत हैं। विश्व की प्रथम नाट्यशाला प्रदेश के सरगुजा जिले में स्थित है।

शिक्षा में इन्हें विविध उपायों से शामिल करना होगा, जिससे ये जीवन्त कलाएँ हमेशा हमारी संस्कृति की अभिन्न अंग बनी रहें।

इनका उपयोग शिक्षण, प्रशिक्षण, अधिगम प्रक्रियाओं को आनंददायी बनाने में एवं बच्चों में विकसित किये जाने वाले हुनर के रूप में करना होगा। इससे बच्चे अधिक सृजनात्मक बनेंगे। स्थानीय कलाकारों और शिल्पकारों को भी विद्यालय से जोड़ना होगा।

## 5.6 व्यावसायिक शिक्षा

वर्तमान में व्यावसायिक शिक्षा केवल उच्चतर माध्यमिक स्तर पर दी जाती है। अब इसे एक विशाल और गतिशील कार्यक्रम के रूप में विकसित करना होगा। कार्य आधारित शिक्षा को स्कूली पाठ्यचर्या के पूर्व प्राथमिक से बारहवीं कक्षा तक समावेश करने में अतिरिक्त व्यावसायिक शिक्षा पर भी पुनर्विचार करना होगा।

व्यावसायिक शिक्षा को इतना सक्षम बनाना होगा कि वह बदलती हुई अर्थव्यवस्था की चुनौतियों का सामना कर सके। इसके लिए चरणबद्ध प्रयास कर एक मिशन के रूप में व्यावसायिक शिक्षा को लागू करना होगा। इसमें गाँव के संकुल और ब्लॉक स्तर से लेकर

ज़िला, नगर, महानगर तक व्यावसायिक शिक्षा तथा प्रशिक्षण केन्द्र और प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना शामिल हैं।

गाँव, कस्बे, शहर के विद्यालयों के आस–पास यदि कोई उत्पादक इकाई कोई व्यवस्था, कोई दुकान, खेत हो तो वे छात्रों के लिए प्रयोगशाला बनें। समुदाय से घनिष्ठता स्थापित करनी होगी, जिससे कुशल कारीगर और सफल व्यक्ति अपने हुनर के शिक्षण हेतु विद्यालय में सहर्ष उपस्थित हों।

व्यावसायिक शिक्षा के वर्तमान पाठ्यक्रम को प्रासंगिक पाठ्यक्रम बनाना होगा जिसमें विशेष आवश्यकता वाले बच्चे भी स्थान पा सके। 'कैरियर गाईडेंस' हेतु मनोविज्ञान और परामर्श का प्रावधान भी करना होगा। व्यावसायिक शिक्षा के पाठ्यक्रम की समय–समय पर समीक्षा की जानी चाहिए और बदलाव भी, ताकि वह पेशे और जीविका के लिहाज़ से स्थानीय लोगों के लिए समयानुकूल हो। यह शिक्षा की मुख्यधारा के समकक्ष हो।

## 5.7 कम्प्यूटर विज्ञान (सूचना और प्रौद्योगिकी)

आधुनिक समाज पर कम्प्यूटर विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी का गहरा प्रभाव है। स्कूली पाठ्यचर्या में इन्हें स्थान दिया जाना आवश्यक है जिससे बच्चे इनसे परिचित होकर इनका प्रयोग कर सकें।

* * *

# 6. शिक्षण–सिद्धांत

वर्तमान में शिक्षा के क्षेत्र में नवीन प्रवृत्तियों का विकास हुआ है। नयी संकल्पनाओं, नये विचारों एवं नये प्रत्ययों का जन्म हुआ है। जो सर्वथा लोकतांत्रिक सिद्धांतों पर आधारित है। अतः इन नये विचारों के संदर्भ में शिक्षा के सिद्धांतों का पुनरावलोकन अपेक्षित होगा।

लोकतंत्र को केवल शासन पद्धति नहीं समझना चाहिए। वस्तुतः लोकतंत्र सामूहिक जीवन की एक शैली है। जिसके अंतर्गत विचारों तथा अनुभवों का आदान–प्रदान किया जाता है। अतः शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने वाले व्यक्तियों के लिए इसे शिक्षा और सिद्धांतों के रूप में स्वीकार करना ही शिक्षा का उद्देश्य है। जनतांत्रिक सिद्धांतों के अनुरूप शिक्षण–सिद्धांत निम्नानुसार होंगे–

1. पाठ्यक्रम को बालक के व्यक्तिव को केन्द्र में रखकर विस्तृत, लचीला तथा समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाया जाएगा।

2. बालक को अधिकाधिक स्वतंत्रता प्रदान करते हुए शैक्षिक अवसरों की समानता पर बल दिया जाएगा।

3. कक्षा शिक्षण में अध्यापक बच्चों का इस प्रकार मार्गदर्शन करें कि छात्र स्वयं ज्ञान की खोज में अग्रसर हो सकें। नियम छात्रों पर थोपे न जाएँ वरन् छात्रों के सहयोग से बनाये जाएँ। जिससे वे उन्हें सहर्ष स्वीकार कर सकें। इसमें समुदाय की सहभागिता भी हो।

4. अध्यापकों का व्यक्तित्व संपूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया की रीढ़ है। उन्हें स्वतंत्रतापूर्वक विद्यालय की नीति निर्माण करने तथा छात्रों के साथ पारस्परिक संबंध बनाने एवं मूल्यांकन के अवसर प्रदान करने होंगे।

5. विद्यालय के वातावरण को जनतांत्रिक बनाने के लिए छात्रों की रुचि, स्व–अनुशासन एवं सामाजिक सहयोग पर भी ध्यान देना होगा।

## 6.1 पाठ्यक्रम में विभिन्न विषयों का महत्व–

बालकों को जिस पाठ्यक्रम के आधार पर शिक्षा दी जानी है उसमें किन विषयों को स्थान दिया जाए ? यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। क्योंकि प्रत्येक विषय की अपनी विशेषता होती है। साथ ही सभी विषयों में अंतर्संबंध भी हैं। एक ओर तो हमें विद्यार्थियों में भाषायी

कुशलता के साथ–साथ सामाजिक कुशलता विकसित करनी है तो दूसरी ओर हमें उसे आंकिक/मात्रात्मक/अमूर्त चिंतन के आधार पर दैनिक जीवन में उपयोगी एवं व्यावहारिक कार्यों के लिए कुशल बनाना है। इसी तरह उसे तर्क, अवलोकन, प्रयोग, निष्कर्ष पर पहुँचने के माध्यम से किसी अवधारणा, नियम, सिद्धांत, प्रक्रिया को समझने में भी सक्षम बनाना है।

यह भी आवश्यक है कि विद्यार्थी प्राकृतिक वातावरण का अवलोकन कर, स्व–विवेक से प्रकृति और स्वयं के मध्य सम्बन्ध स्थापित करें। शिक्षार्थी को विभिन्न भाषाओं के ज्ञान के साथ, गणितीय संक्रियाओं से परिचित कराना होगा।

विज्ञान विषय का अध्ययन उनके वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं अभिवृत्ति का विकास करेगा। सामाजिक विज्ञान के आधार पर उसे एक उत्पादक, जिम्मेदार नागरिक बनाने संबंधी कार्यों का व्यवस्थित आयोजन भी करना होगा।

## 6.2 विद्यार्थी की स्थिति

समस्त शैक्षिक प्रक्रियाओं का केन्द्र विद्यार्थी ही है। शिक्षण की सारी प्रक्रियाएँ विभिन्न प्रकार के ज्ञान, बोध और समझ को विकसित करने के लिए की जाती हैं। इस प्रकार शिक्षण में शिक्षक व विद्यार्थी दोनों का सक्रियता पूर्वक अंतःक्रिया करना आवश्यक है। हमारी कक्षाओं में आने वाले छात्रों में आयु, योग्यताओं, रुचियों और अभिवृत्तियों में तथा सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक स्तर पर विभिन्नताएँ होती हैं जिनका सीखने की प्रक्रिया पर सीधा प्रभाव पड़ता है। अतः कक्षा प्रक्रियाओं में सीखने को प्रभावशाली बनाने हेतु शिक्षार्थी के संदर्भ में कुछ महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर ध्यान देना होगा–

6.2.1 छात्रों को पूर्वानुभव के आधार पर नवीन ज्ञान–सृजन के अवसर देने होंगे।

6.2.2 छात्र पहले सीखी हुई सामग्री के आधार पर स्वतः प्रयत्न कर आगे सीखें।

6.2.3 छात्रों को कक्षा में ऐसा वातावरण देना होगा जिससे वे सहजतापूर्वक सीख सकें।

6.2.4 छात्र अपने अनुभवों की विवेचना करें और उन्हें ज्ञान में परिणत कर सकें।

6.2.5 छात्र परम्परागत तरीके से रटने अथवा याद करने के स्थान पर अवधारणात्मक स्तर पर समझ कर सीखें।

6.2.6 छात्रों को कक्षा में पूर्ण स्वतंत्रता देनी होगी ताकि वह अंतः क्रियाएँ कर सकें।

6.2.7 छात्रों को स्वयं करके सीखने के लिए अवसर देने होंगे।

6.2.8 छात्रों को स्व–विवेक से निर्णय लेकर अपने दायित्वों का निर्वाह करने का अवसर देना होगा।

6.2.9 छात्रों को स्व–अनुशासन एवं स्व–मूल्यांकन का अवसर देना होगा।

6.2.10 छात्रों को कक्षा में सीखी हुई बातों का दैनिक जीवन में उपयोग करने हेतु अवसर देना होगा।

6.2.11 प्रत्येक छात्र ऊर्जावान और सीखने में सक्षम होता है, यह विद्यालय तथा मुख्यतः शिक्षक की जिम्मेदारी है कि वह छात्र को इसका एहसास कराएँ।

## 6.3 शिक्षक की स्थिति

पाठ्यक्रम का प्रभावशाली क्रियान्वयन शिक्षक के सजीव व्यक्तित्व पर ही निर्भर करता है। वह कक्षा के अंदर शिक्षण से संबंधित सभी निर्देशों, प्रक्रियाओं को गतिशीलता प्रदान करता है जिससे कक्षा का वातावरण भी सक्रिय बना रहता है। कक्षा में अंतःक्रियाओं को प्रोत्साहित करने के लिए शिक्षक के संदर्भ में कुछ महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर ध्यान देना होगा।

6.3.1 विद्यार्थी की प्रगति में सहायता करने के लिए शिक्षक को उसे सीखने के लिए प्रेरित करना होगा।

6.3.2 अनेक ऐसे तथ्य होते हैं जिन्हें बताया जाना आवश्यक होता है। शिक्षक को इन नवीन तथ्यों की जानकारी विद्यार्थियों को देनी होगी ?

6.3.3 शिक्षक को विद्यार्थी की प्रकृति एवं उसकी व्यक्तिगत भिन्नताओं (उसके संवेग, बुद्धि, रुचि, योग्यता) का स्पष्ट ज्ञान प्राप्त करना होगा तभी वह विद्यार्थी से सहानुभूति एवं मित्रतापूर्वक सुदृढ़ संबंध स्थापित कर सके।

6.3.4 शिक्षण का तात्पर्य– पथ प्रदर्शन करना है। अतः शिक्षक विद्यार्थियों को उचित मार्ग दिखाने का कार्य करें।

6.3.5 बालक जन्म से ही क्रियाशील होता है अतः शिक्षक को उसकी क्रियाशीलता का सदुपयोग करना होगा।

6.3.6 कक्षा के प्रत्येक छात्र को शिक्षण–प्रक्रिया में समान अधिकार देना होगा।

6.3.7 शिक्षक को पढ़ाते समय यह ध्यान रखना होगा कि वह ज्ञान जीवन में आने वाली परिस्थितियों से संबंधित है या नहीं ?

6.3.8 शिक्षक को छात्रों के लिए आनंददायी, रचनात्मक एवं मनोरंजनात्मक क्रियाओं का आयोजन कर उनकी रचनात्मकता एवं सृजनात्मकता का विकास करना होगा।

6.3.9 शिक्षक समाज का एक प्रतिनिधि होता है। अतः उसे समुदाय को विद्यालय के निकट लाने का कार्य भी करना होगा।

6.3.10 कक्षा के वातावरण को सीखने–सिखाने के अनुकूल बनाने के लिए शिक्षक को उपयुक्त शिक्षण–युक्ति या उपागम के आधार पर अध्यापन करना होगा।

6.3.11 शिक्षकों को शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर आने वाली समस्याओं की पहचान एवं निवारण के लिए सक्षम बनाना होगा आवश्यक संसाधन एवं स्रोत की तलाश भी शिक्षक को अपनी पहल पर करनी होगी।

सूचना और ज्ञान के विस्फोट के साथ–साथ इनके प्रसार के विभिन्न स्रोत भी उभर कर सामने आये हैं। समाज पर बढ़ते तकनीकी प्रभाव के कारण भी शिक्षक की भूमिका में परिवर्तन आया है। अब वह शिक्षार्थी और ज्ञान की दुनिया के बीच की एक मात्र कड़ी नहीं है।

शिक्षा शास्त्रियों का एक बड़ा वर्ग बाल केन्द्रित शिक्षा–व्यवस्था का हिमायती है। महात्मा गांधी, टैगोर, गिजुभाई, फॉब्रेल, मॉन्टेसरी, कृष्णमूर्ति डेवी सभी ने शिक्षा–प्रणाली में बच्चों को केन्द्रीय स्थान पर रखा है। लेकिन इसके बावजूद भी शिक्षा–जगत में शिक्षक का कोई विकल्प नहीं है। अतः शिक्षक को नये कौशल, नयी तकनीकी सीखने में रुचि दिखानी होगी जिससे वह बालकेन्द्रित शिक्षा–व्यवस्था को सही ढंग से लागू कर सके।

पाठ्यचर्या को वास्तविक आकार देने में शिक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसकी कोई भी योजना शिक्षक के सहयोग और स्वीकृति के बिना सफल नहीं हो सकती है। जब तक शिक्षक प्रत्येक शिक्षार्थी की आवश्यकताओं के अनुसार उसे सीखने के तरीके ढूँढ कर उसे सिखाने की जिम्मेदारी स्वीकार नहीं करता तब तक सीखने में गुणवत्ता नहीं आ सकती। अतः शिक्षण की नयी, गतिशील पद्धतियों के प्रचार–प्रसार, नवाचार, शैक्षिक अनुसंधान में शिक्षकों को प्रमुखता देनी होगी। सार्थक ज्ञान वही है, जब शिक्षार्थी अपने ज्ञान का सृजन स्वयं करें। शिक्षक अब ज्ञान के प्रसारक के बजाय शिक्षकों को ज्ञान सृजन कराने वाला उत्प्रेरक है।

शिक्षकों के लिए आवश्यक है कि वे बच्चों का ध्यान रखें और उसके साथ रहना पसंद करें। बच्चों को उनके सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक संदर्भों में समझ सकें। उत्पादक कार्य के महत्व को समझें तथा कक्षा के बाहर और अंदर व्यवहारिक अनुभव देने के लिए कार्य को शिक्षण का माध्यम बनायें।

शिक्षक ग्रहणशील और निरंतर सीखने वाले हो, सामाज के प्रति अपना दायित्व समझे और बेहतर विश्व के निर्माण के लिए कार्य करें।

## 6.4 विद्यालय का वातावरण

प्रत्येक विद्यालय की अपनी एक पहचान, अपनी एक विशिष्ट परम्परा होती है जिससे विद्यार्थियों, शिक्षकों और समुदाय की कई यादें जुड़ी होती हैं। विद्यालय को एक उच्च शैक्षिक और सामुदायिक संस्थान के रूप में विकसित करना पाठ्यचर्या का उद्देश्य है।

बच्चों से जब उनकी पसंद के स्थान के विषय में पूछा जाता है तो अधिकतर वे उस स्थान पर रहना पसंद करते हैं, जो रंग बिरंगा हो, सुरक्षित हो, शांत हो, जहाँ थोड़ी खुली जगह भी हो, पेड़ पौधे और खिलौने हों, छोटे–छोटे कोने हों जहां वे अपनी गतिविधियाँ कर सकें। कक्षाओं में पर्याप्त प्राकृतिक रोशनी हो।

विद्यालय एवं कक्षाओं में बड़े–बड़े चित्र स्थायी रूप से लगे रहें तो कुछ समय बाद वे आकर्षक नही लगते हैं जिसे आकर्षक बनाने हेतु छोटे आकार के भित्ति–चित्र लगाये जा सकते है। विद्यालय की दीवार का प्रयोग बच्चों और शिक्षकों द्वारा बनायी गयी कलाकृतियों के लिए होना चाहिए, क्योंकि मानव स्वभाव के अनुसार उसे अपनी बनायी कृतियों से प्रेम होता है। अतः परिसर को आकर्षक बनाने हेतु इनका उपयोग किया जा सकता है जो कि हर कुछ दिनों के बाद बदल जाएँ।

बच्चों के द्वारा की गयी चित्रकारी और हस्तकार्य के नमूने दीवारों पर लगाने से माता पिता और बच्चों में यह संदेश जाता है कि उनके काम को सराहा जा रहा है।

इन कलाकृतियों को ऐसी जगह और इतनी ऊँचाइयों पर लगाना चाहिए ताकि विभिन्न आयु वर्ग के बच्चे आसानी से इन तक पहुँच पायें और इन्हें देख सकें।

विद्यालय और कक्षाओं के स्थान का अधिकतम उपयोग शिक्षा–संसाधनों के रूप में किया जाना चाहिए। इस हेतु प्राथमिक स्कूल की कक्षाओं की दीवारें लगभग 4 फुट तक काले रंग से रँग दी जाएँ। जिससे बच्चे उसका उपयोग सीखने की प्रक्रियाएँ कर सकें। फर्श पर विभिन्न आकृतियाँ भी बनायी जा सकती हैं जिसका उपयोग बच्चे अलग–अलग गतिविधियों के लिए कर सकते हैं।

कमरे का एक कोना पढ़ने की गतिविधियों के लिए सुरक्षित हो जिसे कहानियों की किताबें एवं अन्य अधिगम सामग्री को रखने के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। जब कुछ बच्चे अपना पाठ जल्दी खत्म कर लेते हैं तो उन्हें इस कोने में जाने और अपनी पसंद की सामग्री चुनने की छूट होनी चाहिए।

कक्षा और विद्यालय को साफ रखना, सामान सही जगह पर रखना आदि कुछ ऐसे अनुभव हैं जिनसे बच्चे अपनी व्यक्तिगत और सामाजिक जिम्मेदारियों से अवगत होते हैं तथा अपनी कक्षा और विद्यालय को अधिक से अधिक आकर्षक बनाना सीखते हैं।

बच्चों में समूह का एक हिस्सा होने की समझ, समूह में काम करने के लिए आवश्यक क्षमताओं को कई तरीकों जैसे सामूहिक संवाद द्वारा अंतःक्रिया द्वारा आत्मसात करवाया जा सकता है। विद्यालय सामाजिक स्थान होते हैं अतः यहाँ समानता का मूल्य बेहद महत्वपूर्ण है।

विद्यालय सीखने और सिखाने की प्रक्रिया को सम्पन्न करने हेतु एक अंतःक्रियात्मक संस्थान है। यहाँ शिक्षार्थी अपने मित्रों के साथ विद्यालय के मैदान में खेलना, खाली समय में बैठकर बातें करना, सुबह की प्रार्थना, उत्सव और विशेष अवसरों पर इकट्ठे होना जैसी कई गतिविधियाँ करते हैं।

## 6.5 सक्षम बनाने वाले वातावरण का पोषण

सार्वजनिक स्थल के रूप में विद्यालय में सामाजिक विविधता और बहुलता के प्रति सम्मान का भाव हो। साथ ही बच्चों के अधिकारों और उनकी गरिमा के प्रति सजगता का भाव हो। इन मूल्यों को स्कूल के दृष्टिकोण का हिस्सा और स्कूली व्यवहार की नींव बनाना होगा।

सीखने की क्षमता देने वाला वातावरण वह होता है जहाँ बच्चे सुरक्षित महसूस करते हैं, जहाँ भय का कोई स्थान नहीं होता और स्कूली रिश्तों में बराबरी और समानता होती है। इसके लिए आवश्यक है कि वह सभी बच्चों से समानता का व्यवहार करें।

शिक्षकों को अपनी कक्षाओं का वातावरण ऐसा बना देना चाहिए जहां बच्चे शिक्षण के दौरान खुलकर प्रश्न पूछ पायें अपने सहपाठियों और शिक्षकों के साथ संवाद कर पायें। विद्यार्थियों की टिप्पणियों को, उनके प्रश्नों को अनसुना करने की बजाय अगर शिक्षक विद्यार्थियों को चर्चा करने के लिए प्रोत्साहित करें तो कक्षा जीवन्त बन जाती है।

इस तरह भयमुक्त वातावरण हर उम्र के शिक्षार्थी में आत्मबल और आत्मविश्वास का विकास करेगा। जिससे आगे चलकर अधिगम की गुणवत्ता में भी बढ़ोत्तरी होगी।

## 6.6 कक्षा का वातावरण

कक्षा में सीखने–सिखाने की प्रक्रिया और उपयुक्त शैक्षिक वातावरण का निर्माण करने के लिए तीन महत्वपूर्ण पहलू हैं, इन पर अधिक ध्यान देना होगा–

1. शिक्षक (प्रभावशाली व्यक्तित्व, विषयवस्तु की समझ, अध्ययन शैली एवं विधियों का चयन)
2. शिक्षार्थी (शारीरिक एवं मानसिक सक्रियता)
3. उपलब्ध भौतिक संसाधन एवं सामग्री।

पाठ्यक्रम में निहित उद्देश्यों की प्राप्ति और कक्षा–शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए छात्रों की गतिविधियों का संयोजन उपयुक्त युक्तियों, विधियों, उपागमों के द्वारा करना होगा। ताकि छात्रों को सीखने संबंधी क्रियाकलापों के लिए अधिक अवसर मिल सकें।

शिक्षण–युक्तियाँ कई प्रकार की हो सकती हैं– अवलोकन, सामग्री और सूचनाओं का संकलन, प्रदर्शन और प्रयोग, प्रायोजना कार्य, क्षेत्र कार्य, शैक्षणिक यात्राएँ (संग्रहालयों, मेलों, औद्योगिक प्रतिष्ठानों तथा ऐतिहासिक महत्व के स्थान) खेल–कूद, समूह गायन में भागीदारी, अभिनय, नाटक, परिचर्चा, वाद–विवाद, समस्या–समाधान, खोजपूर्ण शिक्षण इत्यादि शैक्षिक युक्तियों के महत्वपूर्ण अंग हैं। अध्यापन कार्य के लिए इन युक्तियों का प्रयोग शिक्षक को उसके कार्य में आवश्यक सहयोग प्रदान करेगा। आनंददायी शिक्षा, शिक्षण– अधिगम प्रक्रिया को सुदृढ़ बनाने में सहयोग करेगी तथा छात्रों को सीखने के लिए प्रेरित करेगी।

## 6.7 शिक्षक की स्वायत्तता और व्यावसायिक स्वतंत्रता

शिक्षा के लिए उपयुक्त माहौल बनाने के लिए शिक्षकों की स्वायत्तता आवश्यक है, जिससे वे बच्चों की विभिन्न आवश्यकताओं का ध्यान रख सकें। जितनी स्वतंत्रता, सम्मान और लचीलापन विद्यार्थियों को चाहिए उतना शिक्षक को भी चाहिए।

शिक्षक न केवल आदेश और सूचना प्राप्त करें बल्कि शिक्षा से संबंधित निर्णय लेते समय शिक्षकों की आवाज़ भी सुनी जाए क्योंकि कक्षा और स्कूल की संस्कृति शिक्षकों से

प्रभावित होती है। शिक्षकों और प्रधान अध्यापकों के बीच बातचीत, चर्चा और पारस्परिक सम्मान हो। समुदाय, प्रशासन, विद्यार्थियों के बीच ऐसे वातावरण के विकास की ज़रूरत है जिसमें मिल–जुल कर काम करने की भावना का विकास हो।

## 6.8 शिक्षण–सामग्री

शिक्षण को सार्थक बनाने लिए छात्रों को चिंतन द्वारा, तर्क के आधार पर और स्वयं करके सीखने की प्रक्रिया अपनानी होगी। कक्षा में सहायक शिक्षण–सामग्री का उपयोग करने के लिए शिक्षक को कम लागत और बिना लागत वाली सामग्री का स्वयं निर्माण करने के लिए प्रोत्साहित करना होगा। इस हेतु स्थानीय स्तर पर उपलब्ध–संसाधनों के उपयोग को प्रोत्साहित करना होगा। स्वाध्याय–कौशल के विकास के लिए पुस्तकालय उपलब्ध कराने होंगे। ज्ञान–संवर्धन की सामग्री और लक्ष्य निर्देशित अध्ययन–अध्यापन की युक्तियाँ छात्रों को तीव्र गति से सीखने में सहायक होगी।

सहशैक्षिक क्षेत्रों में शिक्षण की उपयुक्त कार्यनीतियों के द्वारा छात्रों के व्यक्तित्व का निर्माण करना होगा। अनेक विद्यालयीन गतिविधियाँ समुचित योजना एवं सुनियोजित लक्ष्यों के साथ आयोजित की जा सकती हैं। जैसे– प्रातःकालीन सभा, सांस्कृतिक और मनोरंजक क्रिया–कलाप, विद्यालय की सजावट एवं सौंदर्यीकरण, सामुदायिक जीवन के क्रिया–कलाप राष्ट्रीय महत्व के दिवसों को मनाना तथा सृजनात्मक कार्यक्रम करना इत्यादि।

## 6.9 एडुसेट (EDUSAT)

सीखने–सिखाने की प्रक्रियाँ में जहाँ तक हो सके EDUSAT का हर संभव उपयोग हो। कुछ विषयगत अवधारणाएँ एडुसेट से अच्छी तरह स्पष्ट हो सकती है। EDUSAT द्वारा उपलब्ध वीडियों कान्फ्रेंसिंग सुविधाओं द्वारा चर्चा, संवाद, विचार–विमर्श, नवाचारों का आदान–प्रदान आसानी से किया जा सकता है।

* * *

# 7. मूल्यांकन

प्रारंभिक शिक्षा के संदर्भ में हमने शिक्षा के सरोकारों का उल्लेख करते हुए शिक्षा के कुछ सामान्य उद्देश्य निर्धारित किये हैं। इसके साथ ही विभिन्न विषयों के माध्यम से शिक्षार्थी में अभिव्यक्ति एवं सीखने की क्षमताओं के विकास की एक विस्तृत व्यूह रचना पाठ्यचर्या के अंतर्गत विकसित की गयी है।

इस दिशा में किए जा रहे सतत् प्रयासों से हमें अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हो रही है या नहीं? यह जानने के लिए प्रक्रिया एवं उपलब्धि दोनों का सतत एवं व्यापक मूल्यांकन आवश्यक है।

वास्तव में मूल्यांकन शिक्षार्थियों के सीखने की गति और उपलब्धियों के बारे में साक्ष्यों का संकलन, विश्लेषण और व्याख्या करने की एक प्रक्रिया है, जिसके आधार पर प्रक्रिया के संबंध में समुचित निर्णय लिए जाते हैं।

अतः हम कह सकते हैं कि मूल्यांकन का उद्देश्य सदैव सीखने की प्रक्रिया में सुधार होना चाहिए। अर्थात मूल्यांकन सीखने की प्रक्रिया का एक अनिवार्य अंग बन जाए। मूल्यांकन प्रणाली जितनी बेहतर होगी हमें सीखने के परिणाम भी उतने ही बेहतर प्राप्त होंगे। मूल्यांकन से प्राप्त फीडबैक के आधार पर आवश्यक सुधार कर उपलब्धि स्तर को बढ़ाया जा सकता है।

## 7.1 वर्तमान मूल्यांकन प्रणाली

प्रारंभिक शिक्षा की वर्तमान मूल्यांकन प्रणाली केवल समयबद्ध लिखित परीक्षाओं में ही सीमित होकर रह गयी है। इस कारण इसमें निम्नांकित विसंगतियाँ दिखाई पड़ती हैं–

- यह प्रणाली शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति का आधार प्रस्तुत नहीं करती हैं।
- यह प्रणाली छात्रों की सीखने की क्षमताओं एवं उनमें व्यवहारगत् परिवर्तनों का भी मूल्यांकन नहीं करती है।
- ये परीक्षाएँ छात्रों की योग्यता का सही मापन नहीं करतीं।
- परीक्षाएँ मूल्यांकन के विविध तकनीकों के प्रयोग का अवसर नहीं देती हैं।
- ये परीक्षाएँ केवल छात्रों में रटने की प्रक्रिया को बल देती हैं।

हमारी वर्तमान परीक्षा प्रणाली छात्रों का एकांगी मूल्यांकन कर केवल कक्षोन्नति का आधार प्रस्तुत करती रही है।

वर्तमान परीक्षा प्रणाली का एक दोष यह भी है कि इसमें प्रत्येक क्षेत्र में बढ़ती हुई प्रतियोगिता के कारण समाज ने परीक्षा परिणामों को अनावश्यक महत्व दे रखा है। इससे छात्रों के मन–मस्तिष्क में डर एवं तनाव पैदा हो रहे हैं, बच्चों का बचपन छीना जा रहा है।

## 7.2 मूल्यांकन की आवश्यकता

सीखने की प्रक्रिया में अनेक क्षेत्रों एवं अनेक संदर्भों में मूल्यांकन की आवश्यकता होती है। शिक्षार्थियों में क्षमताओं के विकास के लिए मूल्यांकन का प्रयोग विविध रूपों में होना चाहिए–

- **सीखने की प्रक्रिया को बेहतर बनाने के लिए–** मूल्यांकन निदानात्मक होना चाहिए। इसके द्वारा शिक्षक स्वयं अपनी शिक्षण–योजना के प्रभाव का अध्ययन कर आवश्यकता अनुसार उसमें सुधार कर सकता है।

- **छात्रों की उपलब्धि का परीक्षण करने के लिए–** छात्रों के उपलब्धि परीक्षण के लिए मूल्यांकन स्तर का स्वरूप विकासात्मक होना चाहिए। इसके द्वारा शिक्षार्थी के उपलब्धि स्तर का परीक्षण कर उन स्थलों का पता लगाया जा सकता है जहाँ शिक्षार्थी कठिनाई अनुभव करते हैं। इस तरह कठिनाइयों का निदान कर उपचारात्मक शिक्षण–योजना बनाकर उपाय लागू किए जा सकते हैं।

- **शिक्षण प्रक्रिया की मानिटरिंग के लिए–** विकासात्मक मूल्यांकन का एक और मुख्य उद्देश्य शिक्षण प्रक्रिया की मानिटरिंग भी है। इसके आधार पर यह निश्चित किया जाता है कि कार्य, योजना अनुसार हो रहा है कि नहीं।

- **विद्यार्थी को अगली कक्षा में पहुँचाने के लिए–** शैक्षणिक सत्र के अंत में विद्यार्थी पर समग्र मूल्यांकन का प्रयोग किया जाता है। समग्र मूल्यांकन का स्वरूप भी सदैव व्यापक होता है। विकासात्मक मूल्यांकन एवं उपचारात्मक शिक्षण द्वारा शिक्षार्थियों के स्तर में सुधार के प्रयास के बावजूद शिक्षार्थियों का स्तर कभी भी एक सा नहीं हो सकता है। समग्र मूल्यांकन के द्वारा शिक्षार्थियों का योग्यता के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है। इसके द्वारा शिक्षार्थी को अपनी भावी सफलता एवं अगली कक्षा में प्रोन्नति का ज्ञान पहले से ही हो जाता है।

- **अधिगम सामग्री की उपयुक्तता को जानने के लिए–** सीखने की प्रक्रिया में अधिगम सामग्री का शिक्षार्थी के मानसिक स्तर एवं रुचियों के अनुरूप होने के साथ ही पाठ्यचर्या के उद्देश्यों की पूर्ति में कहाँ तक उपयोगी है इस बात का भी मूल्यांकन आवश्यक होता है। इसी आधार पर अधिगम सामग्रियों का संशोधन एवं परिवर्धन कर पाठ्यपुस्तकों का विकास किया जाता है। अधिगम सामग्री उपयुक्त न होने की दशा में इसका सीधा प्रभाव शिक्षार्थियों के उपलब्धि–स्तर पर पड़ता है।

- **शैक्षणिक व्यवस्थाओं का मूल्यांकन–** किसी भी कार्य में उपलब्धि का सीधा संबंध ा उसके नियोजन से होता है। अपने लक्ष्य एवं उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए व्यवस्था का एक ढाँचा विकसित किया जाता है। शिक्षा–क्षेत्र में उपलब्धि स्तर या गुणवत्ता बढ़ाने में हमारी व्यवस्था कितनी सहयोगी एवं उपयुक्त है, शिक्षा में इस बात का भी मूल्यांकन किया जाना आवश्यक होता है। प्रशासनिक एवं शैक्षिक मूल्यांकन से संबंधित व्यवस्था की विभिन्न इकाइयों में समन्वयन का होना भी नितान्त आवश्यक है।

अतएव प्राथमिक शिक्षा में गुणवत्ता विकास के लिए आवश्यक है कि शिक्षार्थियों का विकासात्मक एवं समग्र दोनों तरह का मूल्यांकन किया जाए। इसके साथ ही गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले अन्य घटकों का भी समय–समय पर मूल्यांकन किया जाए। मूल्यांकन की सार्थकता के लिए आवश्यक होता है कि मूल्यांकन से एकत्र साक्ष्यों का विश्लेषण कर उसकी व्याख्या की जाएँ।

यह विश्लेषण एवं व्याख्या तीन प्रकार से की जा सकती है।

1. स्वयं–संदर्भित– छात्रों की प्रगति का स्वयं उनके ही संदर्भ में आकलन, पूर्व में छात्र का जो स्तर था उसको आधार मानकर उस छात्र की प्रगति का विश्लेषण किया जाता है।

2. कसौटी–संदर्भित– शिक्षक द्वारा निर्धारित कसौटियों के संदर्भ में आकलन अर्थात मूल्यांकन की अवधि तक सीखने के शिक्षक द्वारा निर्धारित स्तर की तुलना में छात्र की उपलब्धि का आकलन किया जाता है।

3. मानदण्ड–संदर्भित– साथी समूहों द्वारा की गयी प्रगति के संदर्भ में आकलन, निर्धारित मापदण्ड की तुलना में कक्षा के सभी छात्रों की उपलब्धि का आकलन समूह के सीखने के संदर्भ में किया जाता है।

इस तरह मूल्यांकन की आवश्यकता एवं उपयोगिता सदैव उपलब्धि–स्तर, गुणवत्ता में सुधार से संदर्भित है। केवल कक्षोन्नति से इसका संबंध शिक्षा में तरह–तरह की विकृतियों को जन्म देता है एवं गुणवत्ता में कमी लाता है। अतएव मूल्यांकन में निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिए–

1. मूल्यांकन उन्हीं शिक्षकों की जिम्मेदारी होगी जो छात्रों को पढ़ाते हैं।
2. मूल्यांकन हमेशा अपने उद्देश्यों के साथ सुसंगत होगा।
3. मूल्यांकन सीखने के प्रत्येक प्रयास को प्रतिबिम्बित करेगा।
4. मूल्यांकन सीखने की प्रक्रिया में निहित, सतत् एवं व्यापक होगा।
5. मूल्यांकन सभी छात्रों को अपनी व्यक्तिगत योग्यता प्रकट करने के समान अवसर देगा।
6. मूल्यांकन छात्रों को चिंता, परेशानी एवं अपमान से बचाने वाला होगा।
7. मूल्यांकन विविधतायुक्त एवं मापन की बहुविधि तकनीकों का उपयोग करेगा।
8. मूल्यांकन संपूर्ण पारदर्शिता के साथ विश्वसनीय एवं वैध होगा।
9. विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों के लिए वैकल्पिक मूल्यांकन प्रक्रिया अपनानी होगी।

## सतत तथा व्यापक आकलन

सतत का अभिप्राय आकलन की व्यापकता तथा नियमितता से है। चूँकि बच्चे का विकास एक सतत प्रक्रिया है, उसका आकलन सतत रूप से किया जाना चाहिए। इसका मतलब यह है कि आकलन को शिक्षण तथा अधिगम–प्रक्रिया के साथ सम्बद्ध किया जाए।

दूसरी बात है व्यापकता, इसमें विद्यालय के क्रियाकलापों के संदर्भ में छात्रों के समस्त अनुभव सम्मिलित हैं। इसमें शामिल हैं शारीरिक, बौद्धिक, भावनात्मक तथा सामाजिक विकास, इसमें व्यक्तिगत गुण, रुचियाँ, प्रवृत्ति तथा मूल्य शामिल हैं। व्यापक आकलन करने के लिए बहुविध तकनीकों का प्रयोग होना चाहिए।

## 7.3 मूल्यांकन कैसे हो ?

प्राथमिक स्तर के बच्चे शारीरिक, मानसिक एवं संवेगात्मक दृष्टि से विकासात्मक होते हैं। इसलिए इस अवस्था में उनके सीखने की गति एवं व्यक्तित्व का विकास बड़ी तेजी से होता है। अतएव इस स्तर पर मूल्यांकन का स्वरूप विकासात्मक होगा एवं उसकी निरंतरता एवं व्यापकता पर पूरा जोर रहेगा।

पहली और दूसरी कक्षा में बच्चों का मूल्यांकन, गतिविधियों में बच्चों की भागीदारी के अवलोकन के आधार पर होगा। यहाँ तक कि बच्चों को यह भी पता नहीं होना चाहिए कि उनका मूल्यांकन हो रहा है।

कक्षा 3, 4 एवं 5 में मूल्यांकन थोड़ा औपचारिक होगा, उन्हें यह मालूम हो जाएगा कि उनकी जाँच कब हो रही है? इसके अतिरिक्त अवलोकन मौखिक और क्रियात्मक तकनीकों के साथ ही लिखित परीक्षण भी मूल्यांकन का हिस्सा होगा।

इस स्तर पर निदानात्मक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण पर विशेष बल दिया जाएगा। विषय की समझ, क्षमताओं के विकास स्तर को जानने के लिए समय–समय पर जाँच परीक्षा आयोजित की जाएगी। सह–शैक्षिक गुणों का मूल्यांकन किया जावेगा। छात्र की उपलब्धियों का संचयी अभिलेख रखा जाएगा और प्रत्येक तीन माह में मूल्यांकन रिपोर्ट दी जाएगी।

इस तरह वार्षिक एवं व्यापक मूल्यांकन/आकलन के साथ ही तिमाही, छमाही एवं वार्षिक परीक्षाओं का भी आयोजन किया जाएगा। छात्र के तिमाही एवं छमाही परीक्षाओं की उपलब्धि को वार्षिक परीक्षा के साथ अधिभार देकर कक्षोन्नति दी जाएगी।

तिमाही, छमाही परीक्षाओं के आयोजन का औचित्य वार्षिक परीक्षा में बच्चों पर पड़ने वाले मानसिक दबाव को कम करना होगा। इसके साथ ही आकलन/सतत मूल्यांकन/इकाई मूल्यांकन में अपेक्षित क्षमता हासिल करने में जो छात्र पिछड़ गये हैं, उन्हें स्तर प्राप्त कराने के समय भी यही परीक्षाएँ होंगी। इन परीक्षाओं के आयोजन का एक प्रमुख औचित्य यह भी होगा कि पूरे सत्र के पाठ्यक्रम को प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय तिमाही में विभक्त कर सीखने की गतिविधि एवं मूल्यांकन दोनों को व्यापक बनाया जा सकेगा।

पाठ्यचर्या में प्राथमिक शिक्षा के निर्धारित उद्देश्यों में सीखने क्षमताएँ हासिल करने पर विशेष बल दिया गया है। अतएव मूल्यांकन प्रणाली भी जानकारी आधारित न होकर क्षमता आधारित होगी।

अब तक जानकारी आधारित मूल्यांकन प्रणाली में पाठ्यपुस्तक में वर्णित तथ्य ही मूल्यांकन का आधार हुआ करते हैं और मूल्यांकन का स्वरूप केवल लिखित हुआ करता है। उत्तर के रूप में संग्रहित साक्ष्यों का मूल्यांकन अंकों द्वारा किया जाता रहा है। अब मूल्यांकन प्रणाली को क्षमतापरक बनाने के लिए प्रयास किया जाएगा। आकलन/सतत मूल्यांकन प्रणाली को प्रभावी बनाया जाएगा। इस प्रणाली के अंतर्गत कक्षावार पाठ्यक्रम की क्षमताओं को चिन्हित कर सीखने के माइलस्टोन्स तय किये जावेंगे। मूल्यांकन का तरीका कक्षा 1 एवं 2 में पूर्णतः मौखिक, क्रियात्मक एवं गतिविधि आधारित होगा।

कक्षा 3, 4, 5 में मूल्यांकन का तरीका क्षमताओं की प्रकृति पर निर्भर करेगा अर्थात अब इन कक्षाओं में लिखित के साथ ही मौखिक एवं क्रियात्मक मूल्यांकन की भी व्यवस्था होगी। इस प्रणाली में संग्रहीत साक्ष्यों का मूल्यांकन अंकों के आधार पर न कर अर्जित क्षमताओं की तीन बिन्दुओं पर निरपेक्ष ग्रेडिंग के रूप में किया जाएगा।

बच्चों के संचयी अभिलेख रखने की प्रक्रिया को सरल एवं व्यावहारिक बनाया जाएगा। ताकि प्रणाली को मूल्यांकनकर्ताओं की सहज स्वीकृति एवं समर्थन प्राप्त हो सके।

भविष्य में यह भी प्रयास होगा कि तिमाही, छमाही एवं वार्षिक परीक्षाओं का स्वरूप भी पूर्णतः क्षमता आधारित हो और यहाँ भी मूल्यांकन तीन बिन्दु वाली निरपेक्ष ग्रेडिंग के आधार पर किया जाए।

## 7.4 कक्षा 6, 7 एवं 8 में मूल्यांकन

इस स्तर पर भी मूल्यांकन तिमाही, छमाही एवं वार्षिक परीक्षाओं के रूप में हो तो होगा ही किन्तु इकाईवार जाँच परीक्षा का भी प्रावधान होगा। इसका स्वरूप पूर्णतः निदानात्मक होगा।

इस स्तर पर भी मूल्यांकन को उद्देश्यों के साथ सुसंगत बनाने का प्रयास किया जाएगा। परीक्षाओं का स्वरूप तो लिखित ही होगा किन्तु प्रश्नपत्रों में जानकारी आधारित प्रश्नों के साथ ही शिक्षार्थी में चिन्तनशक्ति, तर्कशक्ति एवं विभिन्न अभिवृत्तियों के विकास के मूल्यांकन एवं परीक्षण को स्थान दिया जाएगा।

तिमाही एवं छमाही परीक्षा में प्राप्त अंकों को वार्षिक परीक्षा में अधिभार देते हुए कक्षोन्नति दी जाएगी। तिमाही, छमाही परीक्षाओं के आयोजन का औचित्य इस स्तर पर भी मूल्यांकन को व्यापक बनाते हुए शिक्षार्थियों को परीक्षा के दबाव एवं भय को कम करना है। सीखने की प्रक्रिया पूरे सत्र में समान एवं अबाध गति से जारी रहे इस दृष्टि से भी तिमाही, छमाही परीक्षा का अधिभार कक्षोन्नति में आवश्यक होगा।

* * *

# 8. शिक्षक एवं शिक्षा–व्यवस्था

''समाज में अध्यापक का स्थान महत्वपूर्ण है। वह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक बौद्धिक परम्पराएँ और तकनीकी कौशल पहुँचाने का केन्द्र है और सभ्यता के प्रकाश को प्रज्वलित रखने में सहायता देता है। ''–डॉ. राधाकृष्णन

## 8.1 शाला और शिक्षक

सभी के लिए गुणवत्तायुक्त शिक्षा और इस हेतु भयमुक्त वातावरण उपलब्ध कराना, पाठ्यचर्या का मुख्य उद्देश्य है। इसके लिये शिक्षकों को गुरूत्तर भाव को त्यागकर सहयोगी की भूमिका निभानी होगी। जिससे शिक्षक–छात्र के बीच आपसी समझ का विकास होगा तथा छात्र निडर होकर सीख सकेंगे।

शिक्षक मित्रवत् व्यवहार कर सीखने–सिखाने के प्रति रुचि जागृत करेंगे। शिक्षक को ऐसे क्रियाकलाप करने होंगे जिससे बच्चों के व्यवहार, कार्यकुशलता आदि में वृद्धि की जा सके।

बच्चों के अभिभावक के रूप में शिक्षक की भूमिका सशक्त हो सकती है। यदि बच्चों की छोटी से छोटी समस्याओं को समझकर शिक्षक उसे दूर करने के लिये बच्चों का मार्गदर्शन करें तो बच्चों के आत्म–विश्वास में वृद्धि की जा सकती है। इससे बच्चों में शिक्षा के प्रति रुझान बढ़ेगा।

## 8.2 समाज व शिक्षक

समाज के विकास में शिक्षक का महत्वपूर्ण योगदान है। यदि शिक्षक शाला व समाज के संबंध को सार्थक बना सके तो निश्चय ही शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता मिलेगी। शिक्षक बच्चों को शिक्षा प्रदान करने और सही ढंग से शाला संचालन में समाज का सहयोग ले सकते हैं। शिक्षक अपनी कार्यकुशलता का परिचय देकर समाज को शाला से जोड़ सकते हैं। शाला में समय–समय पर विभिन्न कार्यक्रम आयोजित कर समाज की सहभागिता सुनिश्चित की जा सकती है। जिससे पालक तथा समाज शाला से सक्रिय रूप से जुड़ सकेंगे।

## 8.3 सीखने की प्रक्रिया की समझ

एक शिक्षक के लिए यह आवश्यक है कि वह बच्चों के सीखने की प्रक्रिया को समझने का निरंतर प्रयास करता रहे। इसके लिए शिक्षक को न केवल गहन चिंतन की आवश्यकता है, बल्कि यह भी ज़रूरी है कि वह बच्चों की गतिविधियों का कक्षा में व कक्षा के बाहर अवलोकन व विश्लेषण करता रहे। बच्चों के परिवेश व संस्कृति का ज्ञान भी शिक्षक को हो।

### 8.3.1 पाठ्यक्रम का ज्ञान

शिक्षक के लिए विषय एवं पाठ्यक्रम की जानकारी आवश्यक है। जिससे शिक्षण–सत्र के दौरान उपलब्ध कार्यदिवसों में अध्यापन का कार्य पूर्ण हो सके। पाठ्यक्रम की जानकारी होने से प्रतिदिन अध्यापन की विषय–वस्तु का निर्धारण हो सकेगा।

### 8.3.2 विषय–वस्तु का आत्मचिंतन एवं उसमें सुधार

शिक्षक को हमेशा पढ़ायी गयी एवं पढ़ायी जाने वाली विषयवस्तु का चिंतन करते रहना चाहिए ताकि उसमें समयानुसार स्वयं सुधार कर सके। इससे न केवल शिक्षक के ज्ञान में वृद्धि होगी बल्कि उसे शिक्षण प्रक्रिया के गुण दोषों का बोध हो सकेगा। शिक्षक में विषयवस्तु के ज्ञान के साथ प्रभावी भावाभिव्यक्ति का होना आवश्यक है। जिससे तथ्यों को रोचक ढंग से प्रस्तुत किया जा सके। इससे बालकों में अध्ययन के प्रति उत्साह की स्थिति निर्मित होगी।

### 8.3.3 विषय एवं शिक्षण–विधि का ज्ञान

शिक्षक को पढ़ाये जाने वाले विषय एवं उसकी शिक्षण विधि का ज्ञान होना आवश्यक है जिससे वह प्रभावी ढंग से शिक्षण कार्य करे। क्योंकि शिक्षण एक कार्य ही नहीं बल्कि एक कला भी है इसके लिए विविध शिक्षण–विधियों का ज्ञान होना आवश्यक होगा। इसके लिए शिक्षक को न केवल नये आयामों से परिचित होना होगा बल्कि इस कला में निपुणता हेतु नवीन शिक्षण–प्रौद्योगिकी का कुशलतापूर्वक प्रयोग करने के लिए लगातार अभ्यास एवं प्रयोग करने की आवश्यकता होगी।

शिक्षा–तकनीक को कक्षा और शिक्षण प्रशिक्षण दोनों जगह सहायक सामग्री के रूप में उपयोग किया जाए।

## 8.4 शिक्षकों का सुदृढ़ीकरण

तेजी से बदलते परिवेश की माँग के अनुरूप विद्यालयीन पाठ्यचर्या, शिक्षण विधियों तथा सीखने–सिखाने की प्रक्रिया को सरल बनाने हेतु परिवर्तन होते रहे हैं। ऐसे परिवर्तनों से शिक्षक को परिचित होना आवश्यक है। इस हेतु समय–समय पर आवश्यकता आधारित शिक्षक–प्रशिक्षण एवं सेवाकालीन प्रशिक्षण की आवश्यकता है, साथ ही उन्हें व्यक्तित्व निर्माण, भावाभिव्यक्ति, अध्ययनशीलता की ओर प्रोत्साहित किया जाना होगा।

### 8.4.1 संसाधन केन्द्र

संसाधन केन्द्र की स्थापना कर शाला संकुल स्तर पर शैक्षिक प्रक्रिया को क्रियाशील बनाना होगा। साथ ही ज़िला– शिक्षा प्रशिक्षण संस्थान के माध्यम से अकादमिक सहयोग द्वारा नवाचारी शिक्षकों को प्रोत्साहित करना होगा।

### 8.4.2 सतत मॉनिटरिंग एवं विश्लेषण

पाठ्यचर्या के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए राज्य, जिला एवं विकासखण्ड स्तर के शैक्षिक कार्य का ही नहीं बल्कि प्रशासकों का भी सेवाकालीन प्रशिक्षण करना होगा। सभी स्तर पर समुचित मॉनिटरिंग प्रणाली का विकास कर अपनी भूमिका सुनिश्चित करनी होगी। मॉनिटरिंग पश्चात् उभरे बिन्दुओं का विश्लेषण कर उपचारात्मक निदान करना होगा। जो शिक्षकों को गतिशील बनाने एवं प्रेरणा देने में सहायक होगा।

### 8.4.3 पाठ्य–सहगामी क्रियाएँ

शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए पाठ्यगत क्रियाओं के साथ–साथ पाठ्य सहगामी क्रियाओं के सफल संचालन हेतु शिक्षकों को स्थानीय संस्कृति, परम्पराओं एवं रीति–रिवाजों के माध्यम से कार्यक्रम आयोजित करना होगा।

### 8.4.4 शिक्षक–शिक्षा

शिक्षक – शिक्षा स्कूली शिक्षा व्यवस्था की माँगों के प्रति अधिक संवेदनशील होनी चाहिए। शिक्षक–शिक्षा शिक्षकों को इस तरह तैयार करे कि वह निम्न भूमिकाओं का निर्वाह कर सके–

- शिक्षक उत्साहवर्धक, सहयोगी, मानवीय गुणों से परिपूर्ण हो जिससे वह विद्यार्थी में सम्पूर्ण संभावनाओं का विकास कर उसे सक्षम नागरिक बना सकें।
- सीखना किस प्रकार हो, इसकी समझ शिक्षक में हो और वह उसके अनुकूल माहौल बनाये।
- शिक्षक भाषा की गहरी समझ व दक्षता हासिल करे।
- शिक्षक कक्षा में शिक्षकीय दक्षताओं के उन्मुखीकरण का प्रयास करें।
- शिक्षक में परामर्श–कौशल और क्षमताओं का विकास हो ताकि बच्चों के शैक्षणिक, व्यक्तिगत और सामाजिक समस्याओं का समाधान हेतु उन्हें प्रेरित करने में शिक्षक को सुविधा हो।
- उत्पादक कार्य के महत्व को समझे तथा कक्षा के बाहर और अंदर व्यवहारिक अनुभव देने के लिए उन कार्यों को शिक्षण का माध्यम बनाए।
- सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक संदर्भों में बच्चों को समझ सके।
- शिक्षक की भूमिका में एक बड़ा परिवर्तन आया है, उसे अब तक ज्ञान के स्रोत के रूप में केन्द्रीय स्थान मिलता रहा है। लेकिन अब उसकी भूमिका एक सहायक की होगी जो सूचना को ज्ञान/बोध में बदलने की प्रक्रिया में विभिन्न उपायों से विद्यार्थियों को सीखने में मदद कर सके।
- विद्यार्थी के सीखने की प्रक्रिया पर सामाजिक वातावरण का प्रभाव पड़ता है। स्कूल और कक्षा का वातावरण भी सीखने की प्रक्रिया को प्रभावित करता है। अतः विद्यार्थी के मनोविज्ञान के साथ–साथ उसके सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक संदर्भों पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है।

### 8.4.4 शिक्षक–प्रशिक्षण

परिवर्तन की प्रक्रिया में शिक्षक एक प्रभावशाली घटक है। शिक्षण विधियाँ, पाठ्यक्रम में परिवर्तन होते रहते हैं। इसलिए शिक्षकों का उपयुक्त एवं पर्याप्त प्रशिक्षण ज़रूरी है। जो पूर्वकालीन एवं सेवाकालीन दोनों ही तरह के हो सकते हैं। सेवाकालीन प्रशिक्षण को पाठ्यचर्या विकास प्रक्रिया का आंतरिक अंग बनाकर शिक्षण प्रविधि और मूल्यांकन प्रक्रिया से सम्बद्ध किया जा सकता है। शिक्षा का स्तर सबसे अधिक शिक्षकों की गुणवत्ता, प्रतिबद्धता

और योग्यता पर निर्भर होता है। अतः शिक्षकों के प्रशिक्षण कार्यक्रम में सुधार आवश्यक होगा। यह प्रशिक्षण स्कूल में सार्थक बदलाव एवं नवाचार का उत्प्रेरक हो।

## 8.5 व्यावसायिक स्वतंत्रता एवं जिम्मेदारी

शिक्षक, पाठ्यचर्या एवं पाठ्यक्रम का पालन सुनिश्चित करें। लेकिन अलग–अलग बच्चों की अलग–अलग समझ होती है। अलग–अलग शालाओं की अलग शैक्षिक समस्याएँ हो सकती हैं। ऐसे में शिक्षक को पाठ्यक्रम पूरा करने में अलग–अलग विधियों का प्रयोग कर पूरा करने की जिम्मेदारी निभानी होगी। इसके लिए शिक्षक को व्यावसायिक स्वतंत्रता देनी होगी।

### 8.5.1 शाला में प्रभावी शिक्षण

शाला में प्रभावी शिक्षण स्व–अधिगम के अनुसार कैसे हो ? कक्षा शिक्षण किस प्रकार हो ? इसका निर्धारण शिक्षक स्वयं करें। शाला में समय के अनुसार उपस्थित होकर शैक्षिक क्रियाकलाप, शैक्षिक कैलेण्डर के अनुसार पूरा करने की जिम्मेदारी सुनिश्चित करें। इसमें स्थानीय आवश्यकतानुसार लचीलापन हो।

## 8.6 संसाधनों की उपलब्धता

विद्यालय की सफलता उसके भौतिक एवं मानवीय संसाधनों की उपलब्धता व उनकी गुणवत्ता पर निर्भर करती है। शिक्षक के रूप में मानवीय संसाधन उपलब्ध होता है, जबकि भौतिक संसाधनों, यथा भवन, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, खेल का मैदान, शैक्षणिक उपकरण इत्यादि विद्यालय के पास आर्थिक क्षमता के अनुरूप संचित होते हैं। इन भौतिक साधनों को शिक्षक स्वयं तथा अभिभावकों, स्थानीय संस्थाओं, शासन के सहयोग से प्राप्त कर विद्यालय के विकास के लिए उपयोग कर सकता है।

### 8.6.1 शिक्षण–युक्तियाँ

पाठ्यचर्या के प्रभावी उपयोग और पाठ्यचर्यागत् उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए समस्त विद्यालयीन गतिविधियों का संयोजन उपयुक्त युक्तियों के द्वारा इस प्रकार किया जाए कि छात्रों को अधिगम क्रियाकलापों के लिए अधिक अवसर मिलें। जैसे– अवलोकन, सूचनाओं का संकलन, प्रदर्शन और प्रयोग, प्रोजेक्ट कार्य, फील्ड वर्क, खेलकूद, साहित्यिक तथा

सांस्कृतिक क्रिया–कलाप आदि बालक में सृजनात्मकता, समस्या समाधान तथा खोजपूर्ण प्रवृत्ति का विकास करते हैं। शिक्षण को सार्थक और ठोस बनाने के लिए प्राकृतिक और मानवीय दोनों प्रकार की परिवेशीय सामग्री का उपयोग करना चाहिए। स्वाध्याय कौशल के विकास के लिए पुस्तकालय तथा स्रोत केन्द्रों के प्रयोग को प्रोत्साहित करना होगा। अध्ययन–अध्यापन की गुणवत्ता में सुधार के लिए सतत और व्यापक मूल्यांकन तथा उपचारात्मक शिक्षण का अत्यधिक महत्व होता है। अतः शिक्षण युक्तियों में इनका समावेश बुद्धिमतापूर्ण ढंग से करना होगा।

* * *

# 9. क्रियान्वयन का ढाँचा

पाठ्यचर्या में निहित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सम्पूर्ण शिक्षा–व्यवस्था का ढाँचा और उसके सभी अंगों के लक्ष्यपूर्ति में योगदान के इस कार्य में विद्यालय, समुदाय, शैक्षिक प्रशासक तथा उससे जुड़े संस्थानों की भूमिका उल्लेखनीय है।

## 9.1 शिक्षाक्रम की संरचना

छत्तीसगढ़ में सम्पूर्ण प्रारंभिक शिक्षा योजना दो भागों में विभाजित है। प्रथम, प्राथमिक स्तर तथा द्वितीय उच्च प्राथमिक स्तर।

9.1.1 प्राथमिक स्तर में प्रथम भाग कक्षा पहली व दूसरी शिक्षार्थी को अनौपचारिक शिक्षा से औपचारिक शिक्षा की ओर ले जाने की शिक्षा–योजना है। कक्षा पहली व दूसरी में भाषा, गणित तथा परिवेश का परिचय विषय अध्यापन के द्वारा दिया जाता है। कक्षा तीन से पाँच औपचारिक शिक्षा का आरंभिक चरण है। जहाँ शिक्षार्थी में आधारभूत कौशलों का विकास किया जाता है।

9.1.2 उच्च प्राथमिक स्तर– कक्षा 6 से 8 में भाषा, गणित, विज्ञान तथा परिवेशीय दक्षताओं के विकास को स्थायी आधार देने का प्रयास किया जाता है। इस स्तर पर सामान्य शिक्षा के लिए शिक्षार्थी की पूर्ण तैयारी होती है।

औपचारिक शिक्षा आरंभ होने के पूर्व शिक्षार्थी के शाला–प्रवेश की तैयारी के रूप में पूरे प्रदेश में आँगनबाड़ी केन्द्रों के संचालन की व्यवस्था महिला एवं बाल–विकास विभाग द्वारा की जाती है।

## 9.2 शैक्षिक प्रशासन का ढाँचा

प्रदेश में शैक्षिक लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए शैक्षिक उत्तरदायित्वों का निर्धारण निम्नानुसार किया गया है–

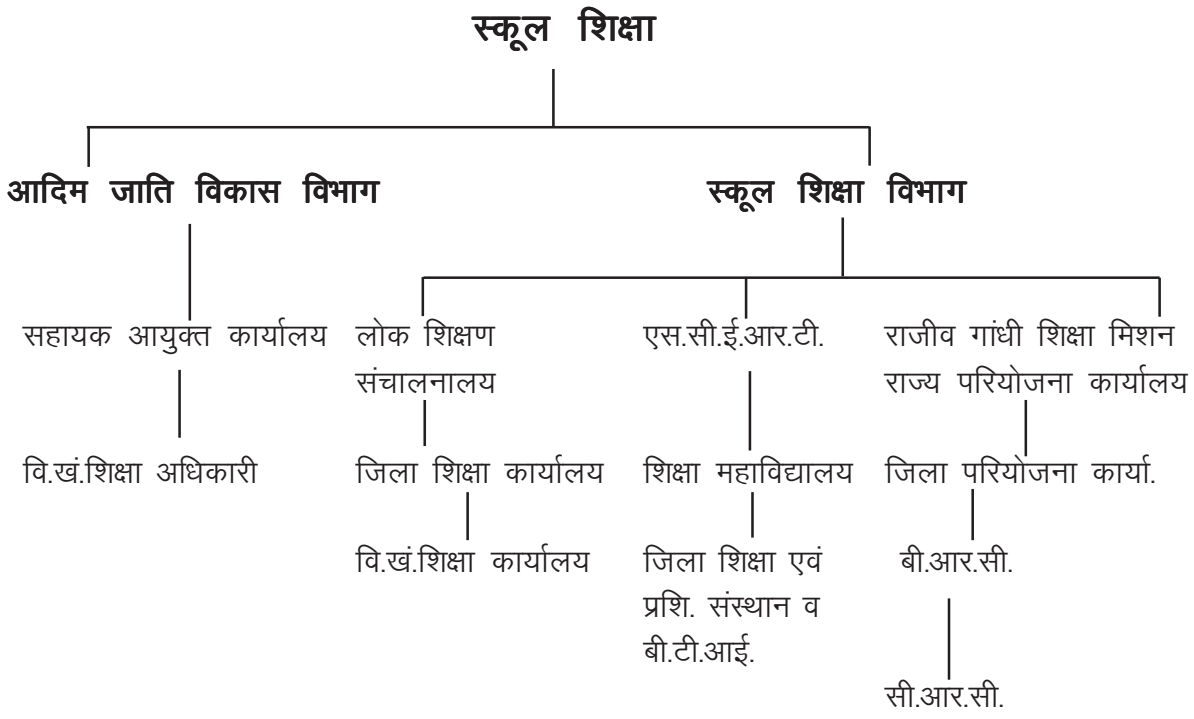


## 9.3 शैक्षिक संस्थानों की भूमिका

छत्तीसगढ़ के शैक्षिक प्रशासन की संरचना के अनुरूप उसकी विभिन्न इकाइयों की भूमिका अलग–अलग उद्देश्यों की पूर्ति के लिए महत्वपूर्ण है। संलग्न संस्थानों की गतिविधियों का विवरण निम्नानुसार है–

### 9.3.1 लोक–शिक्षण संचालनालय

सम्पूर्ण प्रदेश में स्कूल शिक्षा के विकास, भौतिक तथा वित्तीय संसाधनों की व्यवस्था, शिक्षकों की व्यवस्था, प्रारंभिक विद्यालयों की सतत मॉनिटरिंग शैक्षिक विकास की योजनाओं का निर्माण उक्त विभाग द्वारा अधीनस्थ जिला शिक्षा कार्यालयों तथा विकासखण्ड शिक्षा कार्यालयों, पंचायत के माध्यम से किया जाता है।

### 9.3.2 राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

प्रदेश में प्रारंभिक शिक्षा के लिए पाठ्यचर्या विकास, पाठ्यक्रम निर्माण तथा उसके अनुरूप पाठ्यपुस्तकों का लेखन एवं निर्माण एस.सी.ई.आर.टी. द्वारा किया जाता है। प्रारंभिक विद्यालयों में गुणवत्ता आधारित शिक्षण विधियों के विकास के लिए शिक्षकों को प्रशिक्षण

उपलब्ध कराना, सहायक शिक्षण सामग्री तैयार करना, शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों की मॉनिटरिंग व मार्गदर्शन करना तथा राज्य की शैक्षणिक गतिविधियों को गति देने के लिए समन्वयन उपलब्ध कराना इसका महत्वपूर्ण कार्य है। आवश्यकता–अनुसार शैक्षणिक विकास, शैक्षिक समस्याओं के निराकरण के लिए शोध एवं नवाचार का संचालन भी परिषद् द्वारा किया जाता है।

### 9.3.3 आदिवासी विकास विभाग

दूरस्थ क्षेत्रों व दुर्गम वनांचलों में इस विभाग द्वारा आदिवासी समूह के बच्चों के कल्याण के लिए शिक्षा उपलब्ध कराने के साथ अन्य सुविधाएँ तथा विकास के साधन सुलभ कराये जाते हैं। आश्रम शालाओं के माध्यम से विद्यार्थियों को आवास के साथ पोषण–आहार की भी व्यवस्था की जाती है। यहाँ शिक्षा के साथ कार्य दक्षताओं का प्रशिक्षण दिया जाता है। विभिन्न प्रोत्साहन योजनाओं का संचालन तथा छात्रवृत्ति के वितरण की व्यवस्था भी इस विभाग का दायित्व है।

### 9.3.4 राजीव गांधी शिक्षा मिशन

राज्य परियोजना कार्यालय अपने अधीनस्थ इकाइयों के माध्यम से राज्य की शैक्षणिक आवश्यकताओं का पता लगाकर उन स्थानों में शिक्षा–सुविधा सुलभ कराने के लिए उत्तरदायी है। राज्य शासन द्वारा शिक्षा के लोकव्यापीकरण की दिशा में किये जा रहे प्रयासों में मिशन यथोचित सहायता देता है। राजीव गांधी शिक्षा मिशन, शिक्षा–सुविधा मुहैया कराने के साथ–साथ शिक्षक प्रशिक्षण के द्वारा शिक्षा में गुणवत्ता बढ़ाने की दिशा में भी कार्य करता है। राज्य में बच्चों की दर्ज संख्या के आधार पर अतिरिक्त कक्ष एवं अतिरिक्त शिक्षकों का प्रावधान भी मिशन के तहत किया जाता है। राज्य में स्थापित विकासखंड में विकासखंड स्रोत केन्द्र एवं संकुल में संकुल स्रोत केन्द्र स्थापित किया जाएगा। इसके लिए इनका भी सुदृढ़ीकरण करना होगा।

### 9.3.5

शाला के वास्तविक कार्य दिवसों में अध्यापन कार्य प्रभावित न हो इसके लिए इन प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन अवकाश के दिनों में करना होगा।

मल्टीमीडिया के माध्यम से प्रशिक्षण कार्यक्रमों को गति प्रदान करनी होगी। टेलीकान्फ्रेसिंग के द्वारा दूरस्थ क्षेत्रों में प्रशिक्षण दिया जा सकेगा। जिससे प्रशिक्षण अपने मूल उद्देश्यों के अनुरूप हो सके। इसके अतिरिक्त कम्प्यूटर, शैक्षिक सी.डी., कैसेट्स इत्यादि भी प्रशिक्षण केन्द्रों को उपलब्ध कराए जायेंगे।

शालाओं में प्रशिक्षित शिक्षकों की संख्या में वृद्धि हो इसके लिए राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् के मानदण्डों के आधार पर प्रशिक्षण संस्थाओं में सीट्स की संख्या में वृद्धि करनी होगी तथा पत्राचार पाठ्यक्रम द्वारा भी प्रशिक्षण दिया जा सकता है।

प्रशिक्षण कार्यक्रमों की गुणवत्ता में वृद्धि के लिए उनका आवश्यकता आधारित होना, उपयुक्त प्रशिक्षण योजना, सही क्रियान्वयन एवं समय की पाबंदी पर विशेष ध्यान देना होगा।

## राज्य शैक्षिक प्रबंध एवं प्रशिक्षण संस्थान (सीमेट) छत्तीसगढ़

शिक्षार्थियों, शैक्षिक उद्देश्यों, ज्ञान की प्रकृति, शैक्षिक स्पष्ट योजनायें सामाजिक जगह के रूप में शाला की समझ, कक्षा में चल रही गतिविधियों को निर्देशित करने के सिद्धांतों तक पहुँचने में मदद कर सकती है। शिक्षा के उद्देश्य व्यापक हैं। अतः हमें योजना बनाने तथा व्यवस्थागत मुद्दों के प्रति ध्यान आकृष्ट करने की आवश्यकता है– राज्य शैक्षिक प्रबंध एवं प्रशिक्षण संस्थान छत्तीसगढ़ इन्हीं दायित्वों का निर्वहन कर रहा है। यह प्रकोष्ठ निम्न लिखित बिंदुओं पर भी गंभीरता से कार्य कर रहा है–

1. राज्य के शैक्षिक प्रशासकों का शैक्षिक प्रबंधन एवं प्रशासन में प्रशिक्षण एवं उन्मुखीकरण।
2. शैक्षिक संस्थाओं को शैक्षिक योजना एवं प्रबंधन में मार्गदर्शन।
3. शैक्षिक शोध–कार्य का संवर्धन।
4. शैक्षिक प्रबंधन सूचना प्रणाली का निर्माण।
5. शैक्षिक आवश्यकता लघु एवं दीर्घ अवधि के प्रशिक्षण कार्यक्रमों का विकास।
6. शैक्षिक माड्यूल का विकास।
7. विभिन्न शैक्षिक संस्थाओं से समन्वय।

## आंग्ल भाषा शिक्षण संस्थान, (ई.एल.टी.आई) छत्तीसगढ़ ( E L T I )

वर्तमान समय में भाषा के शिक्षण पर अधिक जोर दिये जाने की आवश्यकता है, ताकि बच्चे में दोतरफा संप्रेषण क्षमता का विकास हो सके। इस हेतु घर की भाषा और विद्यालय की भाषा के साथ ही अंतराष्ट्रीय भाषा के बीच एक पुल बनाने के लिये हर संभव प्रयास करना होगा। आंग्ल भाषा शिक्षण संस्थान छत्तीसगढ़ इसी दिशा में कार्यरत है। प्रकोष्ठ आंग्ल भाषा शिक्षण में गुणवत्ता विकास हेतु निम्न बिंदुओं पर भी सजग है–

1. प्राथमिक, उच्च प्राथमिक, हाईस्कूल, हायर सेकेंडरी शिक्षकों व्याख्याताओं हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना।
2. शैक्षिणिक संस्थानों के अंग्रेजी भाषा–शिक्षण की गुणवत्ता सुधार हेतु कार्य करना ।
3. प्रशिक्षण कार्यक्रमों हेतु जिला स्त्रोत पुरुषों को प्रशिक्षण देना।
4. अंग्रेजी शिक्षण में नवाचार, शोध हेतु समय–समय पर सेमिनार आयोजित करना।
5. पाठ्यपुस्तकों और कक्षा 01 से 08 तक सहायक सामग्री का निर्माण करना।
6. प्रशिक्षण के द्वारा शिक्षकों में अध्यापन–कौशल का विकास, मूल्यांकन क्षमता, मानसिक दबाव से मुक्त कक्षा के वातावरण के निर्माण के कौशल विकास हेतु अनेक तकनीकों के उपयोग संबंधी बिंदुओं पर ध्यानाकर्षण करना।

## 9.4 मॉनिटरिंग एवं मूल्यांकन

शैक्षिक क्रियाकलापों तथा प्रशिक्षण कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन हेतु मानिटरिंग तथा मूल्यांकन आवश्यक है। यह शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावशाली बनाएगा तथा अकादमिक सहयोग प्रदान करने की दिशा में सहायक होगा। मॉनिटरिंग के द्वारा संस्थाओं की बुनियादी संरचना, भौतिक और मानवीय संसाधनों की उपलब्धता की जानकारी प्राप्त हो सकेगी। साथ ही उनकी नियमित गतिविधियों की जानकारी तथा उपलब्धि की गुणवत्ता के आधार पर उन्हें सुधारात्मक तथा उपचारात्मक निर्देशन भी दिया जा सकेगा।

सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया की समीक्षा हेतु सभी क्षेत्रों में लघुशोध कार्य, नवाचार और क्रियात्मक अनुसंधान किये जाने होंगे।

* * *